॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

माघमास-माहात्म्य

वसिष्ठजीका दिलीपसे तथा भृगुजीका विद्याधरसे माघस्नानकी महिमा बताना तथा माघस्नानसे विद्याधरकी कुरूपताका दूर होना

ऋषियोंने कहा—लोमहर्षण सूतजी! अब हमें माघका माहात्म्य सुनाइये, जिसको सुननेसे लोगोंका महान् संशय दूर हो जाय।

सूतजी बोले—मुनिवरो! आपलोगोंको साधुवाद देता हूँ। आप भगवान् श्रीकृष्णके शरणागत भक्त हैं; इसीलिये प्रसन्नता और भक्तिके साथ आपलोग बार-बार भगवान्‌की कथाएँ पूछा करते हैं। मैं आपके कथनानुसार माघ-माहात्म्यका वर्णन करूँगा; जो अरुणोदयकालमें स्नान करके इसका श्रवण करते हैं, उनके पुण्यकी वृद्धि और पापका नाश होता है। एक समयकी बात है, राजाओंमें श्रेष्ठ महाराज दिलीपने यज्ञका अनुष्ठान पूरा करके ऋषियोंद्वारा मङ्गल-विधान होनेके पश्चात् अवभृथ-स्नान किया। उस समय सम्पूर्ण नगरनिवासियोंने उनका बड़ा सम्मान किया। तदनन्तर राजा अयोध्यामें रहकर प्रजाजनोंकी रक्षा करने लगे। वे समय-समयपर वसिष्ठजीकी अनुमति लेकर प्रजावर्गका पालन किया करते थे। एक दिन उन्होंने वसिष्ठजीसे कहा—'भगवन्! आपके प्रसादसे मैंने

आचार, दण्डनीति, नाना प्रकारके राजधर्म, चारों वर्णों और आश्रमोंके कर्म, दान, दानकी विधि, यज्ञ, यज्ञके विधान, अनेकों व्रत, उनके उद्यापन तथा भगवान् विष्णुकी आराधना आदिके सम्बन्धमें बहुत कुछ सुना है। अब माघस्नानका फल सुननेकी इच्छा है। मुने! जिस विधिसे इसको करना चाहिये, वह मुझे बताइये।'

वसिष्ठजीने कहा—राजन्! मैं तुम्हें माघस्नानका फल बतलाता हूँ, सुनो। जो लोग होम, यज्ञ तथा इष्टापूर्त कर्मोंके बिना ही उत्तम गति प्राप्त करना चाहते हों, वे माघमें प्रातःकाल बाहरके जलमें स्नान करें। जो गौ, भूमि, तिल, वस्त्र, सुवर्ण और धान्य आदि वस्तुओंका दान किये बिना ही स्वर्गलोकमें जाना चाहते हों, वे माघमें सदा प्रातःकाल स्नान करें। जो तीन-तीन राततक उपवास, कृच्छ्र और पराक आदि व्रतोंके द्वारा अपने शरीरको सुखाये बिना ही स्वर्ग पाना चाहते हों, उन्हें भी माघमें सदा प्रातःकाल स्नान करना चाहिये। वैशाखमें जल और अन्नका दान उत्तम है, कार्तिकमें तपस्या और पूजाकी प्रधानता है तथा माघमें जप, होम और दान—ये तीन बातें विशेष हैं। जिन लोगोंने माघमें प्रातःस्नान, नाना प्रकारका दान और भगवान् विष्णुका स्तोत्र-पाठ किया है, वे ही दिव्यधाममें आनन्दपूर्वक निवास करते हैं। प्रिय वस्तुके त्याग और नियमोंके पालनसे माघ सदा धर्मका साधक होता है और अधर्मकी जड़ काट देता है। यदि सकामभावसे माघस्नान किया जाय तो उससे मनोवाञ्छित फलकी सिद्धि होती है और निष्कामभावसे स्नान आदि करनेपर वह मोक्ष देनेवाला होता है। निरन्तर दान करनेवाले, वनमें रहकर तपस्या करनेवाले

और सदा अतिथि-सत्कारमें संलग्न रहनेवाले पुरुषोंको जो दिव्यलोक प्राप्त होते हैं, वे ही माघस्नान करनेवालोंको भी मिलते हैं। अन्य पुण्योंसे स्वर्गमें गये हुए मनुष्य पुण्य समाप्त होनेपर वहाँसे लौट आते हैं; किन्तु माघस्नान करनेवाले मानव कभी वहाँसे लौटकर नहीं आते। माघस्नानसे बढ़कर कोई पवित्र और पापनाशक व्रत नहीं है। इससे बढ़कर कोई तप और इससे बढ़कर कोई महत्त्वपूर्ण साधन नहीं है। यही परम हितकारक और तत्काल पापोंका नाश करनेवाला है। महर्षि भृगुने मणिपर्वतपर विद्याधरसे कहा था—'जो मनुष्य माघके महीनेमें जब उषःकालकी लालिमा बहुत अधिक हो, गाँवसे बाहर नदी या पोखरेमें नित्य स्नान करता है, वह पिता और माताके कुलकी सात-सात पीढ़ियोंका उद्धार करके स्वयं देवताओंके समान शरीर धारण कर स्वर्गलोकमें चला जाता है।'

दिलीपने पूछा—ब्रह्मन्! ब्रह्मर्षि भृगुने किस समय मणिपर्वतपर विद्याधरको धर्मोपदेश किया था—बतानेकी कृपा करें।

वसिष्ठजी बोले—राजन्! प्राचीन कालमें एक समय बारह वर्षोंतक वर्षा नहीं हुई। इससे सारी प्रजा उद्विग्न और दुर्बल होकर दसों दिशाओंमें चली गयी। उस समय हिमालय और विन्ध्यपर्वतके बीचका प्रदेश खाली हो गया। स्वाहा, स्वधा, वषट्कार और वेदाध्ययन—सब बंद हो गये। समस्त लोकमें उपद्रव होने लगा। धर्मका तो लोप हो ही गया था, प्रजाका भी अभाव हो गया। भूमण्डलपर फल, मूल, अन्न और पानीकी बिलकुल कमी हो गयी। उन दिनों नाना

प्रकारके वृक्षोंसे आच्छादित नर्मदा नदीके रमणीय तटपर महर्षि भृगुका आश्रम था। वे उस आश्रमसे शिष्योंसहित निकलकर हिमालय पर्वतकी शरणमें गये। वहाँ कैलासगिरिके पश्चिममें मणिकूट नामका पर्वत है जो सोने और रत्नोंका ही बना हुआ है। उस परम रमणीय श्रेष्ठ पर्वतको देखकर अकालपीड़ित ब्रह्मर्षि भृगुका मन बहुत प्रसन्न हुआ और उन्होंने वहीं अपना आश्रम बना लिया। उस मनोहर शैलपर वनों और उपवनोंमें रहते हुए सदाचारी भृगुजीने दीर्घकालतक भारी तपस्या की।

इस प्रकार जब ब्रह्मर्षि भृगुजी वहाँ अपने आश्रमपर निवास करते थे, एक समय एक विद्याधर अपनी पत्नीके साथ पर्वतसे नीचे उतरा। वे दोनों मुनिके पास आये और उन्हें प्रणाम करके अत्यन्त दु:खी हो एक ओर खड़े हो गये। उन्हें इस अवस्थामें देख ब्रह्मर्षिने मधुर वाणीसे पूछा—'विद्याधर! प्रसन्नताके साथ बताओ, तुम दोनों इतने दु:खी क्यों हो?'

विद्याधरने कहा—द्विजश्रेष्ठ! मेरे दु:खका कारण सुनिये। मैं पुण्यका फल पाकर देवलोकमें गया। वहाँ देवताका शरीर, दिव्य नारीका सुख और दिव्य भोगोंका अनुभव प्राप्त करके भी मेरा मुँह बाघका-सा हो गया। न जाने यह किस दुष्कर्मका फल उपस्थित हुआ है। यही सोच-सोचकर मेरे मनको कभी शान्ति नहीं मिलती। ब्रह्मन्! एक और भी कारण है जिससे मेरा मन व्याकुल हो रहा है। यह मेरी कल्याणमयी पत्नी बड़ी मधुरभाषिणी तथा सुन्दरी है। स्वर्गलोकमें शील, उदारता, गुणसमूह, रूप और यौवनकी सम्पत्तिद्वारा इसकी समानता करनेवाली एक भी स्त्री नहीं है।

कहाँ तो यह देवमुखी सुन्दरी रमणी और कहाँ मेरे-जैसा व्याघ्रमुख पुरुष? ब्रह्मन्! मैं इसी बातकी चिन्ता करके मन-ही-मन सदा जलता रहता हूँ।

भृगुजीने कहा—विद्याधरश्रेष्ठ! पूर्वजन्ममें तुम्हारे द्वारा जो अनुचित कर्म हुआ है, वह सुनो। निषिद्ध कर्म कितना ही छोटा क्यों न हो, परिणाममें वह भयङ्कर हो जाता है। तुमने पूर्वजन्ममें माघके महीनेमें एकादशीको उपवास करके द्वादशीके दिन शरीरमें तेल लगा लिया था। इसीसे तुम्हारा मुँह व्याघ्रके समान हो गया। पुण्यमयी एकादशीका व्रत करके द्वादशीको तेलका सेवन करनेसे पूर्वकालमें इलानन्दन पुरूरवाको भी कुरूप शरीरकी प्राप्ति हुई थी। वे अपने शरीरको कुरूप देख उसके दुःखसे बहुत दुःखी हुए और गिरिराज हिमालयपर जाकर गङ्गाजीके किनारे स्नान आदिसे पवित्र हो प्रसन्नतापूर्वक कुशासनपर बैठे। राजाने अपनी सम्पूर्ण इन्द्रियोंको वशमें करके हृदयमें भगवान्‌का ध्यान करना आरम्भ किया। उन्होंने ध्यानमें देखा—भगवान्‌का श्रीविग्रह नूतन नील मेघके समान श्याम है। उनके नेत्र कमलदलके समान विशाल हैं। वे अपने हाथोंमें शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म धारण किये हुए हैं। उनका श्रीअङ्ग पीताम्बरसे ढका है। वक्षःस्थलमें कौस्तुभमणि अपना प्रकाश फैला रही है तथा वे गलेमें वनमाला धारण किये हुए हैं। इस प्रकार श्रीहरिका चिन्तन करते हुए राजाने प्राणवायुके मार्गको भीतर ही रोक लिया और नासिकाके अग्रभागपर दृष्टि जमाये कुण्डलिनीके मुखको ऊपर उठाकर स्वयं सुषुम्णा नाडीमें स्थित हो गये। इस तरह एक मासतक निराहार रहकर उन्होंने दुष्कर तपस्या की।

इस थोड़े दिनोंकी तपस्यासे ही भगवान् संतुष्ट हो गये। उन्होंने राजाके सात जन्मोंकी आराधनाका स्मरण करके उन्हें स्वयं प्रकट हो प्रत्यक्ष दर्शन दिया। उस दिन माघ शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथि थी, सूर्य मकर राशिपर स्थित थे। भगवान् वासुदेवने बड़ी प्रसन्नताके साथ चक्रवर्ती नरेश पुरूरवापर शङ्खका जल छोड़ा और उन्हें अत्यन्त सुन्दर एवं कमनीय रूप प्रदान किया। वह रूप इतना मनोहर था, जिससे देवलोककी नायिका उर्वशी भी आकृष्ट हो गयी और उसने पुरूरवाको पतिरूपमें प्राप्त करनेकी अभिलाषा की। इस प्रकार राजा पुरूरवा भगवान्से वरदान पाकर कृतकृत्य हो अपने नगरमें लौट आये। विद्याधर! कर्मकी गति ऐसी ही है। इसे जानकर भी तुम क्यों खिन्न होते हो? यदि तुम अपने मुखकी कुरूपता दूर करना चाहते हो तो मेरे कहनेसे शीघ्र ही मणिकूट-नदीके जलमें माघस्नान करो। वह प्राचीन पापोंका नाश करनेवाला है। तुम्हारे भाग्यसे माघ बिलकुल निकट है। आजसे पाँच दिनके बाद ही माघमास आरम्भ हो जायगा। तुम पौषके शुक्लपक्षकी एकादशीसे ही नीचे वेदीपर सोया करो और एक महीनेतक निराहार रहकर तीनों समय स्नान करो। भोगोंको त्यागकर जितेन्द्रियभावसे तीनों काल भगवान् विष्णुकी पूजा करते रहो। विद्याधरश्रेष्ठ! जिस दिन माघ शुक्ला एकादशी आयेगी, उस दिनतक तुम्हारे सारे पाप जलकर भस्म हो जायँगे। फिर द्वादशीके पवित्र दिनको मैं मन्त्रपूत कल्याणमय जलसे अभिषेक करके तुम्हारा मुख कामदेवके समान सुन्दर कर दूँगा। फिर देवमुख होकर इस सुन्दरीके साथ तुम सुखपूर्वक क्रीड़ा करते रहना।

विद्याधर! माघके स्नानसे विपत्तिका नाश होता है और माघके स्नानसे पाप नष्ट हो जाते हैं। माघस्नान सब व्रतोंसे बढ़कर है तथा यह सब प्रकारके दानोंका फल प्रदान करनेवाला है। पुष्कर, कुरुक्षेत्र, ब्रह्मावर्त, पृथूदक, अविमुक्तक्षेत्र (काशी), प्रयाग तथा गङ्गा-सागर-संगममें दस वर्षोंतक शौच-सन्तोषादि नियमोंका पालन करनेसे जो फल प्राप्त होता है, वह माघके महीनेमें तीन दिनोंतक प्रातःस्नान करनेसे ही मिल जाता है। जिनके मनमें दीर्घकालतक स्वर्गलोकके भोग भोगनेकी अभिलाषा हो, उन्हें सूर्यके मकर राशिपर रहते समय जहाँ कहीं भी जल मिले, प्रातःकाल स्नान करना चाहिये। आयु, आरोग्य, रूप, सौभाग्य एवं उत्तम गुणोंमें जिनकी रुचि हो, उन्हें सूर्यके मकर राशिपर रहनेतक प्रातःकाल अवश्य स्नान करना चाहिये। जो नरकसे डरते हैं और दरिद्रताके महासागरसे जिन्हें त्रास होता है, उन्हें सर्वथा प्रयत्नपूर्वक माघमासमें प्रातःकाल स्नान करना चाहिये। देवश्रेष्ठ! दरिद्रता, पाप और दुर्भाग्यरूपी कीचड़को धोनेके लिये माघस्नानके सिवा दूसरा कोई उपाय नहीं है। अन्य कर्मोंको यदि अश्रद्धापूर्वक किया जाय तो वे बहुत थोड़ा फल देते हैं; किन्तु माघस्नान यदि श्रद्धाके बिना भी विधिपूर्वक किया जाय तो वह पूरा-पूरा फल देता है। गाँवसे बाहर नदी या पोखरेके जलमें जहाँ कहीं भी निष्काम या सकामभावसे माघस्नान करनेवाला पुरुष इस लोक और परलोकमें दुःख नहीं देखता। जैसे चन्द्रमा कृष्णपक्षमें क्षीण होता और शुक्लपक्षमें बढ़ता है, उसी प्रकार माघमासमें स्नान करनेपर पाप क्षीण होता और पुण्यराशि बढ़ती है। जैसे समुद्रमें नाना प्रकारके रत्न उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार माघस्नानसे आयु, धन और स्त्री

आदि सम्पत्तियाँ प्राप्त होती हैं। जैसे कामधेनु और चिन्तामणि मनोवाञ्छित भोग देती हैं, उसी प्रकार माघस्नान सब मनोरथोंको पूर्ण करता है। सत्ययुगमें तपस्याको, त्रेतामें ज्ञानको, द्वापरमें भगवान्‌के पूजनको और कलियुगमें दानको उत्तम माना गया है; परन्तु माघका स्नान सभी युगोंमें श्रेष्ठ समझा गया है।* सबके लिये, समस्त वर्णों और आश्रमोंके लिये माघका स्नान धर्मकी धारावाहिक वृष्टि करता है।

भृगुजीके ये वचन सुनकर वह विद्याधर उसी आश्रमपर ठहर गया और माघमासमें भृगुजीके साथ ही उसने विधिपूर्वक पर्वतीय नदीके कुण्डमें पत्नीसहित स्नान किया। ब्रह्मर्षि भृगुके अनुग्रहसे विद्याधरने अपना मनोरथ प्राप्त कर लिया। फिर वह देवमुख होकर मणिपर्वतपर आनन्दपूर्वक रहने लगा। भृगुजी उसपर कृपा करके बहुत प्रसन्न हुए और पुनः विन्ध्यपर्वतपर अपने आश्रममें चले आये। उस विद्याधरका मणिमय पर्वतकी नदीमें माघस्नान करनेमात्रसे कामदेवके समान मुख हो गया तथा भृगुजी भी नियम समाप्त करके शिष्योंसहित विन्ध्याचल पर्वतकी घाटीमें उतरकर नर्मदा-तटपर आये।

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! ब्रह्मर्षि भृगुके द्वारा विद्याधरके प्रति कहा हुआ यह माघ-माहात्म्य सम्पूर्ण भुवनका सार है तथा नाना प्रकारके फलोंसे विचित्र जान पड़ता है। जो प्रतिदिन इसका श्रवण करता है, वह देवताकी भाँति समस्त सुन्दर भोगोंको प्राप्त कर लेता है।

---

* कृते तपः परं ज्ञानं त्रेतायां यजनं तथा। द्वापरे च कलौ दानं माघः सर्वयुगेषु च॥ (२२१। ८०)

मृगशृङ्ग मुनिका भगवान्‌से वरदान प्राप्त करके अपने घर लौटना

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! मैं माघमासका प्रभाव बतलाता हूँ, सुनो। इसे भक्तिपूर्वक सुनकर मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है। प्राचीन रथन्तर कल्पके सत्ययुगमें कुत्स नामके एक ऋषि थे जो ब्रह्माजीके पुत्र थे। वे बड़े ही तेजस्वी और निष्पाप थे। उन्होंने कर्दम ऋषिकी सुन्दरी कन्याके साथ विधिपूर्वक विवाह किया। उसके गर्भसे मुनिके वत्स नामक पुत्र हुआ जो वंशको बढ़ानेवाला था। वत्सकी पाँच वर्षकी अवस्था होनेपर पिताने उनका उपनयन-संस्कार करके उन्हें गायत्री-मन्त्रका उपदेश किया। अब वे ब्रह्मचर्यका पालन करते हुए भृगुकुलमें निवास करने लगे। प्रतिदिन प्रात:काल और सायंकाल अग्निहोत्र, तीनों समय स्नान और भिक्षाके अन्नका भोजन करते थे। इन्द्रियोंको काबूमें रखते, काला मृगचर्म धारण करते और सदा स्वाध्यायमें संलग्न रहते थे। पैरसे लेकर शिखातक लंबा पलाशका डंडा, जिसमें कोई छेद न हो, लिये रहते थे। उनके कटिभागमें मूँजकी मेखला शोभा पाती थी। हाथमें सदा कमण्डलु धारण करते, स्वच्छ कौपीन पहनते, शुद्ध भावसे रहते और स्वच्छ यज्ञोपवीत धारण करते थे। उनका मस्तक समिधाओंकी भस्मसे सुशोभित था। वे सबके नयनोंको प्रिय जान पड़ते थे। प्रतिदिन माता, पिता, गुरु, आचार्य, अन्यान्य बड़े-बूढ़ों, संन्यासियों तथा ब्रह्मवादियोंको प्रणाम करते थे। बुद्धिमान् वत्स ब्रह्मयज्ञमें तत्पर रहते और सदा शुभ कर्मोंका अनुष्ठान किया करते थे।

वे हाथमें पवित्री धारण करके देवताओं, ऋषियों और पितरोंका तर्पण करते थे। फूल, चन्दन और गन्ध आदिको कभी हाथसे छूते भी नहीं थे। मौन होकर भोजन करते। मधु, पिण्याक और खारा नमक नहीं खाते थे। खड़ाऊँ नहीं पहनते थे तथा सवारीपर नहीं चढ़ते। शीशेमें मुँह नहीं देखते। दन्तधावन, ताम्बूल और पगड़ी आदिसे परहेज रखते थे। नीला, लाल तथा पीला वस्त्र, खाट, आभूषण तथा और भी जो-जो वस्तुएँ ब्रह्मचर्य-आश्रमके प्रतिकूल बतायी गयी हैं; उन सबका वे स्पर्शतक नहीं करते थे, सदा शान्तभावसे सदाचारमें ही तत्पर रहते थे।

ऐसे आचारवान् और विशेषत: ब्रह्मचर्यका पालन करनेवाले वत्स मुनि सूर्यके मकर राशिपर रहते माघमासमें भक्तिपूर्वक प्रात:स्नान करते थे। वे उस समय विशेषरूपसे शरीरकी शुद्धि करते थे। आकाशमें जब इने-गिने तारे रह जाते थे, उस समय—ब्रह्मवेलामें तो वे नित्यस्नान करते थे और फिर जब आधे सूर्य निकल आते, उस समय भी माघका स्नान करते थे। वे मन-ही-मन अपने भाग्यकी सराहना करने लगे—'अहो! इस पश्चिमवाहिनी कावेरी नदीमें स्नानका अवसर मिलना प्राय: मनुष्योंके लिये कठिन है, तो भी मैंने मकरार्कमें यहाँ स्नान किया। वास्तवमें मैं बड़ा भाग्यवान् हूँ। समुद्रमें मिली हुई जितनी नदियाँ हैं, उन सबका प्रवाह जहाँ पश्चिम या उत्तरकी ओर है, उस स्थानका प्रयागसे भी अधिक महत्त्व बतलाया गया है। मैंने अपने पूर्वपुण्योंके प्रभावसे आज कावेरीका पश्चिमगामी प्रवाह प्राप्त किया है। वास्तवमें मैं कृतार्थ हूँ, कृतार्थ हूँ, कृतार्थ हूँ।' इस प्रकार सोचते हुए वे

प्रसन्न होकर कावेरीके जलमें तीनों काल स्नान करते थे। उन्होंने कावेरीके पश्चिमगामी प्रवाहमें तीन सालतक माघ-स्नान किया। उसके पुण्यसे उनका अन्त:करण शुद्ध हो गया। वे ममता और कामनासे रहित हो गये। तदनन्तर माता, पिता और गुरुकी आज्ञा लेकर वे सर्वपापनाशक कल्याणतीर्थमें आ गये। उस सरोवरमें भी एक मासतक माघस्नान करके ब्रह्मचारी वत्स मुनि तपस्या करने लगे। राजन्! इस प्रकार उन्हें उत्तम तपस्या करते देख भगवान् विष्णु प्रसन्न होकर उनके आगे प्रत्यक्ष प्रकट हुए और बोले—'महाप्राज्ञ मृगशृङ्ग! मैं तुमपर बहुत प्रसन्न हूँ।' यों कहकर भगवान् पुरुषोत्तमने उनके ब्रह्मरन्ध्र (मस्तक)-का स्पर्श किया।

तब वत्स मुनि समाधिसे विरत हो जाग उठे और उन्होंने अपने सामने ही भगवान् विष्णुको उपस्थित देखा। वे सहस्र सूर्योंके समान तेजस्वी कौस्तुभमणिरूप आभूषणसे अत्यन्त भासमान दिखायी देते थे। तब मुनिने बड़े वेगसे उठकर भगवान्‌को प्रणाम किया और बड़े भावसे सुन्दर स्तुति की।

भगवान् हृषीकेशकी स्तुति और नमस्कार करके वत्स मुनि अपने मस्तकपर हाथ जोड़े चुपचाप भगवान्‌के सामने खड़े हो गये। उस समय उनके नेत्रोंसे आनन्दके आँसू बह रहे थे और सारे शरीरमें रोमाञ्च हो आया था।

तब श्रीभगवान्‌ने कहा—मृगशृङ्ग! तुम्हारी इस स्तुतिसे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। माघमासमें इस सरोवरके जलमें जो तुमने स्नान और तप किये हैं, इससे मैं बहुत सन्तुष्ट हूँ। मुने! तुम निरन्तर कष्ट सहते-सहते थक गये हो। दक्षिणाओंसहित यज्ञ, दान, अन्यान्य नियम तथा यमोंके पालनसे भी मुझे

उतना संतोष नहीं होता जितना माघके स्नानसे होता है। पहले तुम मुझसे वर माँगो। फिर मैं तुम्हें मनोवाञ्छित वस्तु प्रदान करूँगा। मृगशृङ्ग! तुम मेरी प्रसन्नताके लिये मैं जो आज्ञा दूँ, उसका पालन करो। इस समय तुम्हारे ब्रह्मचर्यसे जिस प्रकार ऋषियोंको सन्तोष हुआ है, उसी प्रकार तुम यज्ञ करके देवताओंको और सन्तान उत्पन्न करके पितरोंको संतुष्ट करो। मेरे सन्तोषके लिये ये दोनों कार्य तुम्हें सर्वथा करने चाहिये। अगले जन्ममें तुम ब्रह्माजीके पुत्र महाज्ञानी ऋभुनामक जीवन्मुक्त ब्राह्मण होओगे और निदाघको वेदान्तवाक्यजन्य ज्ञानका उपदेश करके पुनः परमधामको प्राप्त होओगे।

मृगशृङ्ग बोले—देवदेव! सम्पूर्ण देवताओंद्वारा वन्दित जगन्नाथ! आप यहाँ सदा निवास करें और सबको सब प्रकारके भोग प्रदान करते रहें। आप सदा सब जीवोंको सब तरहकी सम्पत्ति प्रदान करें। भगवन्! यदि मैं आपका कृपापात्र हूँ तो यही एक वर, जिसे निवेदन कर चुका हूँ, देनेकी कृपा करें। कमलनयन! चरणोंमें पड़े हुए भक्तोंका दुःख दूर करनेवाले अच्युत! आप मुझपर प्रसन्न होइये। शरणागतवत्सल! मैं आपकी शरणमें आया हूँ।

भगवान् विष्णु बोले—मृगशृङ्ग! एवमस्तु, मैं सदा यहाँ निवास करूँगा। जो लोग यहाँ मेरा पूजन करेंगे, उन्हें सब प्रकारकी सम्पत्ति हाथ लगेगी। विशेषतः जब सूर्य मकर राशिपर हों, उस समय इस सरोवरमें स्नान करनेवाले मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो मेरे परमपदको प्राप्त होंगे। व्यतीपात योगमें, अयन प्रारम्भ होनेके दिन, संक्रान्तिके समय, विषुव योगमें, पूर्णिमा और अमावास्या तिथिको तथा चन्द्रग्रहण और

सूर्यग्रहणके अवसरपर यहाँ स्नान करके यथाशक्ति दान देनेसे और तुम्हारे मुखसे निकले हुए इस स्तोत्रका मेरे सामने पाठ करनेसे मनुष्य मेरे लोकमें प्रतिष्ठित होगा।

भगवान् गोविन्दके यों कहनेपर उन ब्राह्मणकुमारने पुनः प्रणाम किया और भक्तोंके अधीन रहनेवाले श्रीहरिसे फिर एक प्रश्न किया—'कृपानिधे! देवेश्वर! मैं तो कुत्स मुनिका पुत्र वत्स हूँ; फिर मुझे आपने मृगशृङ्ग कहकर क्यों सम्बोधित किया?'

श्रीभगवान् बोले—ब्रह्मन्! इस कल्याण-सरोवरके तटपर जब तुम तपस्या करनेमें लगे थे, उस समय जो मृग प्रतिदिन यहाँ पानी पीने आते थे वे निर्भय होकर तुम्हारे शरीरमें अपने सींग रगड़ा करते थे। इसीसे श्रेष्ठ महर्षि तुम्हें मृगशृङ्ग कहते हैं। आजसे सब लोग तुम्हें मृगशृङ्ग ही कहेंगे।

यों कहकर सबको सब कुछ प्रदान करनेवाले भगवान् सर्वेश्वर वहाँ रहने लगे। तदनन्तर मृगशृङ्ग मुनिने भगवान्का पूजन किया और उनकी आज्ञा लेकर वे उस पर्वतसे चले गये। संसारका उपकार करनेके लिये उन्होंने गृहस्थ-धर्मको स्वीकार करनेका निश्चय किया और अपने अन्तःकरणमें निरन्तर वे आदिपुरुष कमलनयन भगवान् विष्णुका चिन्तन करने लगे। अपनी जन्मभूमि भोजराजनगरमें घर आकर उन्होंने माता और पिताको नमस्कार करके अपना सारा समाचार कह सुनाया। माता-पिताके नेत्रोंमें आनन्दके आँसू छलक आये। उन्होंने पुत्रको छातीसे लगाकर बारम्बार उसका मस्तक सूँघा और प्रेमपूर्वक अभिनन्दन किया। वत्स अपने गुरुको प्रणाम करके फिर स्वाध्यायमें लग गये। पिता, माता

और गुरु—तीनोंकी प्रतिदिन सेवा करते हुए उन्होंने सम्पूर्ण वेदोंका अध्ययन किया और गुरुकी आज्ञा ले विधिपूर्वक व्रतस्नान और उत्सर्गका कार्य पूर्ण किया। तत्पश्चात् महामना मृगशृङ्ग अपने पितासे इस प्रकार बोले—'तात! पुत्रकी उत्पत्तिके लिये पिता और माताको जो क्लेश सहने पड़ते हैं, उनका बदला सौ वर्षोंमें भी नहीं चुकाया जा सकता; अतः पुत्रको उचित है कि वह माता-पिता तथा गुरुका भी सदा ही प्रिय करे। इन तीनोंके अत्यन्त सन्तुष्ट होनेपर सब तपस्या पूर्ण हो जाती है। इन तीनोंकी सेवाको ही सबसे बड़ा तप कहा गया है। इनकी आज्ञाका उल्लङ्घन करके जो कुछ भी किया जाता है, वह कभी सिद्ध नहीं होता। विद्वान् पुरुष इन्हीं तीनोंकी आराधना करके तीनों लोकोंपर विजय पाता है। जिससे इन तीनोंको संतोष हो, वही मनुष्योंके लिये चारों पुरुषार्थ कहा गया है; इसके सिवा जो कुछ भी है, वह उपधर्म कहलाता है। मनुष्यको उचित है कि वह अखण्ड ब्रह्मचर्यका पालन करते हुए पितासे क्रमशः तीन, दो या एक वेदका अध्ययन करनेके पश्चात् गृहस्थाश्रममें प्रवेश करे। यदि पत्नी अपने वशमें रहे तो गृहस्थाश्रमसे बढ़कर दूसरी कोई वस्तु नहीं है। पति और पत्नीकी अनुकूलता धर्म, अर्थ और कामकी सिद्धिका प्रधान कारण है। यदि स्त्री अनुकूल हो तो स्वर्गसे क्या लेना है—घर ही स्वर्ग हो जाता है और यदि पत्नी विपरीत स्वभावकी मिल गयी तो नरकमें जानेकी क्या आवश्यकता है—यहीं नरकका दृश्य उपस्थित हो जाता है। सुखके लिये गृहस्थाश्रम स्वीकार किया जाता है; किन्तु वह सुख पत्नीके अधीन है। यदि पत्नी विनयशील हो तो

धर्म, अर्थ और कामकी प्राप्ति निश्चित है।

जो गृहकार्यमें चतुर, सन्तानवती, पतिव्रता, प्रिय वचन बोलनेवाली और पतिके अधीन रहनेवाली है—ऐसी उपर्युक्त गुणोंसे युक्त नारी स्त्रीके रूपमें साक्षात् लक्ष्मी है। इसलिये अपने समान वर्णकी उत्तम लक्षणोंवाली भार्यासे विवाह करना चाहिये। जो पिताके गोत्र अथवा माताके सपिण्डवर्गमें उत्पन्न न हुई हो, वह स्त्री विवाह करनेयोग्य होती है तथा उसीसे द्विजोंके धर्मकी वृद्धि होती है।

जिसको कोई रोग न हो, जिसके भाई हो, जो अवस्था और कदमें अपनेसे कुछ छोटी हो, जिसका मुख सौम्य हो तथा जो मधुर भाषण करनेवाली हो, ऐसी भार्याके साथ द्विजको विवाह करना चाहिये। जिसका नाम पर्वत, नक्षत्र, वृक्ष, नदी, सर्प, पक्षी तथा नौकरोंके नामपर न रखा गया हो, जिसके नाममें कोमलता हो, ऐसी कन्यासे बुद्धिमान् पुरुषको विवाह करना चाहिये।

इस प्रकार उत्तम लक्षणोंकी परीक्षा करके ही किसी कन्याके साथ विवाह करना उचित है। उत्तम लक्षण और अच्छे आचरणवाली कन्या पतिकी आयु बढ़ाती है, अतः पिताजी! ऐसी भार्या कहाँ मिलेगी?

कुत्सने कहा—परम बुद्धिमान् मृगशृङ्ग! इसके लिये कोई विचार न करो। तुम्हारे-जैसे सदाचारी पुरुषके लिये कुछ भी दुर्लभ नहीं है। जो सदाचारहीन, आलसी, माघ-स्नान न करनेवाले, अतिथि-पूजासे दूर रहनेवाले, एकादशीको उपवास न करनेवाले, महादेवजीकी भक्तिसे शून्य, माता-पितामें भक्ति न रखनेवाले, गुरुको सन्तोष न देनेवाले,

गौओंकी सेवासे विमुख, ब्राह्मणोंका हित न चाहनेवाले, यज्ञ, होम और श्राद्ध न करनेवाले, दूसरोंको न देकर अकेले खानेवाले, दान, धर्म और शीलसे रहित तथा अग्निहोत्र न करके भोजन करनेवाले हैं, ऐसे लोगोंके लिये ही वैसी स्त्रियाँ दुर्लभ हैं। बेटा! प्रातःकाल स्नान करनेपर माघका महीना विद्या, निर्मल कीर्ति, आरोग्य, आयु, अक्षय धन, समस्त पापोंसे मुक्ति तथा इन्द्रलोक प्रदान करता है। बेटा! माघमास सौभाग्य, सदाचार, सन्तान-वृद्धि, सत्सङ्ग, सत्य, उदारभाव, ख्याति, शूरता और बल—सब कुछ देता है। कहाँतक गिनाऊँ, वह क्या-क्या नहीं देता। पुण्यात्मन्! कमलके समान नेत्रोंवाले भगवान् विष्णु माघस्नान करनेसे तुमपर बहुत प्रसन्न हैं।

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! पिताके ये सत्य वचन सुनकर मृगशृङ्ग मुनि मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने पिताके चरणोंमें मस्तक झुकाकर पुनः प्रणाम किया और दिन-रात वे अपने हृदयमें श्रीहरिका ही चिन्तन करने लगे।

मृगशृङ्ग मुनिके द्वारा माघके पुण्यसे एक हाथीका उद्धार तथा मरी हुई कन्याओंका जीवित होना

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! भोजपुरमें उचथ्य नामक एक श्रेष्ठ मुनि थे। उनके कमलके समान नेत्रोंवाली एक कन्या थी, जिसका नाम सुवृत्ता था। वह माघमासमें प्रतिदिन सबेरे ही उठकर अपनी कुमारी सखियोंके साथ कावेरी नदीके पश्चिमगामी प्रवाहमें स्नान किया करती थी। स्नानके समय वह इस प्रकार प्रार्थना करती—'देवि! तुम सह्य-पर्वतकी घाटीसे निकलकर श्रीरङ्गक्षेत्रमें प्रवाहित होती हो। श्रीकावेरी! तुम्हें नमस्कार है। मेरे पापोंका नाश करो। मरुद्वृधे! तुम बड़ी सौभाग्यशालिनी हो। माघमासमें जो लोग तुम्हारे जलमें स्नान करते हैं उनके बड़े-बड़े पापोंको हर लेती हो। माता! मुझे मङ्गल प्रदान करो। पश्चिमवाहिनी कावेरी! मुझे पति, धन, पुत्र, सम्पूर्ण मनोरथ और पातिव्रत्य-पालनकी शक्ति दो।' यों कहकर सुवृत्ता कावेरीको प्रणाम करती और जब कुछ-कुछ सूर्यका उदय होने लगता, उसी समय वह नित्यस्नान किया करती थी। इस प्रकार उसने तीन वर्षोंतक माघस्नान किया। उसका उत्तम चरित्र तथा गृहकार्यमें चतुरता देखकर पिताका मन बड़ा प्रसन्न रहता था। वे सोचने लगे—अपनी कन्याका विवाह किससे करूँ? इसी बीचमें कुत्स मुनिने अपने पुत्र ब्रह्मचारी वत्सका विवाह करनेके लिये

उचथ्यकी सुमुखी कन्या सुवृत्ताका वरण करनेका विचार किया। सुवृत्ता बड़ी सुन्दरी थी। उसमें अनेक शुभ लक्षण थे। वह बाहर-भीतरसे शुद्ध तथा नीरोग थी। उस समय उसकी कहीं तुलना नहीं थी। वत्स मुनिने उससे विवाह करनेकी अभिलाषा की।

एक दिन सुवृत्ता अपनी तीन सखियोंके साथ माघस्नान करनेके लिये अरुणोदयके समय कावेरीके तटपर आयी। उसी समय एक भयानक जंगली हाथी पानीसे निकला। उसे देखकर सुवृत्ता आदि कन्याएँ भयसे व्याकुल होकर भागीं। हाथी भी बहुत दूरतक उनके पीछे-पीछे गया। चारों कन्याएँ वेगसे दौड़नेके कारण हाँफने लगीं और तिनकोंसे ढँके हुए एक बहुत बड़े जलशून्य कुएँमें गिर पड़ीं। कुएँमें गिरते ही उनके प्राण निकल गये। जब वे घर लौटकर नहीं आयीं तब माता-पिता उनकी खोज करते हुए इधर-उधर भटकने लगे। उन्होंने वन-वनमें घूमकर झाड़ी-झाड़ी छान डाली। आगे जानेपर उन्हें एक गहरा कुआँ दिखायी दिया, जो तिनकोंसे ढँका होनेके कारण प्राय: दृष्टिमें नहीं आता था। उन्होंने देखा, वे कमललोचना कन्याएँ कुएँके भीतर निर्जीव होकर पड़ी हैं। उनकी माताएँ कन्याओंके पास चली गयीं और शोकग्रस्त हो बारम्बार उन्हें छातीसे लगाकर 'विमले! कमले! सुवृत्ते! सुरसे! आदि नाम ले-लेकर विलाप करने लगीं।'

कन्याओंकी माताएँ जब इस प्रकार जोर-जोरसे क्रन्दन कर रही थीं, उसी समय तपस्याके भण्डार, कान्तिमान्, धीर तथा जितेन्द्रिय, श्रीमान् मृगशृङ्ग मुनि वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने

मन-ही-मन एक उपाय सोचा और सोचकर उन्हें आश्वासन देते हुए कहा—'जबतक इन कमलनयनी कन्याओंको जीवित न कर दूँ तबतक आपलोग इनके सुन्दर शरीरकी रक्षा करें।' यों कहकर मुनि परम पावन कावेरीके तटपर गये और कण्ठभर पानीमें खड़े हो, मुख एवं भुजाओंको ऊपर उठाये सूर्यदेवकी ओर देखते हुए मृत्यु देवताकी स्तुति करने लगे। इसी बीचमें एक समय वही हाथी पानीके भीतरसे उठा और उन ब्राह्मण मुनिको मारनेके लिये सूँड़ उठाये बड़े वेगसे उनके समीप आया। हाथीका क्रोध देखकर भी मुनिवर मृगशृङ्ग जलमें विचलित नहीं हुए, अपितु, चित्रलिखित-से चुपचाप खड़े रहे। पास आनेपर एक ही क्षणमें उस गजराजका क्रोध चला गया। वह बिलकुल शान्त हो गया। उसने मुनिको सूँड़से पकड़कर अपनी पीठपर बिठा लिया। मुनि उसके भावको समझ गये। उसके कंधेपर सुखपूर्वक बैठनेसे उन्हें बड़ा सन्तोष हुआ और जप समाप्त करके हाथमें जल ले 'मैंने आठ दिनोंके माघस्नानका पुण्य तुम्हें दे दिया।' यों कहकर उन्होंने शीघ्र ही वह जल हाथीके मस्तकपर छोड़ दिया। इससे गजराज पापरहित हो गया और मानो इस बातको स्वयं भी समझते हुए उसने प्रलयकालीन मेघके समान बड़े जोरसे गर्जना की। उसकी इस गर्जनासे भी मुनिके मनमें बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने कृपापूर्वक उस गजराजकी ओर देखकर उसके ऊपर अपना हाथ फेरा। मुनिके हाथका स्पर्श होनेसे उसने हाथीका शरीर त्याग दिया और आकाशमें देवताकी भाँति दिव्यरूप धारण किये दृष्टिगोचर हुआ। उस रूपमें उसे

देखकर मुनीश्वरको बड़ा विस्मय हुआ।

तब दिव्यरूपधारी उस जीवने कहा—मुनीश्वर! मैं कृतार्थ हो गया, क्योंकि आपने मुझे अत्यन्त निन्दित एवं पापमयी पशुयोनिसे मुक्त कर दिया। दयानिधे! अब मैं अपना सारा वृत्तान्त बतलाता हूँ, सुनिये। पूर्वकालकी बात है, नैषध नगरमें विश्वगुप्त नामसे प्रसिद्ध परम धर्मात्मा तथा स्वधर्मपालनमें तत्पर एक वैश्य रहते थे। मैं उन्हींका पुत्र था। मेरा नाम धर्मगुप्त था। स्वाध्याय, यजन, दान, सूद लेना, पशुपालन, गोरक्षा, खेती और व्यापार— यही सब मेरा काम था। द्विजश्रेष्ठ! मैं [अनुचित] काम और दम्भसे सदा दूर ही रहा। सत्य बोलता और किसीकी निन्दा नहीं करता था। इन्द्रियोंको काबूमें रखकर अपनी स्त्रीसे ही अनुराग करता था और परायी स्त्रियोंके सम्पर्कसे बचा रहता था। मुझमें राग, भय और क्रोध नहीं थे। लोभ और मत्सरको भी मैंने छोड़ रखा था। दान देता, यज्ञ करता, देवताओंके प्रति भक्ति रखता और गौओं तथा ब्राह्मणोंके हितमें संलग्न रहता था। सदा धर्म, अर्थ और कामका सेवन करता तथा व्यापारके काममें कभी किसीको धोखा नहीं देता था। ब्राह्मणलोग जब यज्ञ करते, उस समय उन्हें बिना माँगे ही धन देता था। समयपर श्राद्ध तथा सम्पूर्ण देवताओंका पूजन करता था। अनेक प्रकारके सुगन्धित द्रव्य, बहुत-से पशु, दूध-दही, मट्ठा, गोबर, घास, लकड़ी, फल, मूल, नमक, जायफल, पीपल, अन्न, सागके बीज, नाना प्रकारके वस्त्र, धातु, ईखके रससे तैयार होनेवाली वस्तुएँ और अनेक प्रकारके रस बेचा करता था। जो दूसरोंको देता

था, वह तौलमें कम नहीं रहता था और जो औरोंसे लेता, वह अधिक नहीं होता था। जिन रसोंके बेचनेसे पाप होता है, उनको छोड़कर अन्य रसोंको बेचा करता था। बेचनेमें छल-कपटसे काम नहीं लेता था। जो मनुष्य साधु पुरुषोंको व्यापारमें ठगता है, वह घोर नरकमें पड़ता है तथा उसका धन भी नष्ट हो जाता है। मैं सब देवताओं, ब्राह्मणों तथा गौओंकी प्रतिदिन सेवा करता और पाखण्डी लोगोंसे दूर रहता था। ब्रह्मन्! किसी भी प्राणीसे मन, वाणी और क्रियाद्वारा ईर्ष्या किये बिना ही जो जीविका चलायी जाती है, वही परम धर्म है—मैं ऐसी ही जीविकासे जीवन-निर्वाह करता था।

इस प्रकार धर्मके मार्गसे चलकर मैंने एक करोड़ स्वर्णमुद्राओंका उपार्जन किया। मेरे एक ही पुत्र था जो सम्पूर्ण गुणोंमें श्रेष्ठ था। मैंने अपने सारे धनको दो भागोंमें बाँटकर आधा तो पुत्रको दे दिया और आधा अपने लिये रखा। अपने हिस्सेका धन लेकर पोखरा खुदवाया। नाना प्रकारके वृक्षोंसे युक्त बगीचा लगवाया। अनेक मण्डपोंसे सुशोभित देवमन्दिर बनवाया। मरुभूमिके मार्गोंमें पौंसले और कुएँ बनवाये तथा ठहरनेके लिये धर्मशालाएँ तैयार करायीं। कन्यादान, गोदान और भूमिदान किये। तिल, चावल, गेहूँ और मूँग आदिका भी दान किया। उड़द, धान, तिल और घी आदिका दान तो मैंने बहुत बार किया।

तदनन्तर रसके चमत्कारोंका वर्णन करनेवाला कोई कापालिक मेरे पास आया और कौतूहल पैदा करनेके लिये कुछ करामात दिखाकर उसने मुझे अपने मायाजालमें फँसाकर

ठग लिया। उसकी करतूतें देखकर उसके प्रति मेरा विश्वास बढ़ गया और रसवाद—चाँदी, सोना आदि बनानेके नामपर मेरा सारा धन बरबाद हो गया। उस कापालिकने मुझे भ्रममें डालकर बहुत दिनोंतक भटकाया। उसके लिये धन दे-देकर मैं दरिद्र हो गया। माघका महीना आया और मैंने दस दिनोंतक सूर्योदयके समय महानदीमें स्नान किया; किन्तु बुढ़ापेके कारण इससे अधिक समयतक मैं स्नानका नियम चलानेमें असमर्थ हो गया। इसी बीचमें मेरा पुत्र देशान्तरमें चला गया। घोड़े मर गये। खेती नष्ट हो गयी और बेटेने वेश्या रख ली। फिर भी भाई-बन्धु यह सोचकर कि यह बेचारा बूढ़ा, धर्मात्मा और पुण्यवान् है, धर्मके ही उद्देश्यसे मुझे कुछ सूखा अन्न और भात दे दिया करते थे। अब मैं अपना धर्म बेचकर कुटुम्बका पालन-पोषण करने लगा, केवल माघस्नानके फलको नहीं बेच सका। एक दिन जिह्वाकी लोलुपताके कारण दूसरेके घरपर खूब गलेतक ठूँसकर मिठाई खा ली। इससे अजीर्ण हो गया। अजीर्णसे अतिसारकी बीमारी हुई और उससे मेरी मृत्यु हो गयी। केवल माघस्नानके प्रभावसे मैं एक मन्वन्तरतक स्वर्गमें देवराज इन्द्रके पास रहा और पुण्यकी समाप्ति हो जानेपर हाथीकी योनिमें उत्पन्न हुआ। जो लोग धर्म बेचते हैं, वे हाथी ही होते हैं। विप्रवर! इस समय आपने हाथीकी योनिसे भी मेरा उद्धार कर दिया। मुझे स्वर्गकी प्राप्ति होनेके लिये आपने पुण्यदान किया है। मुनीश्वर! मैं कृतार्थ हो गया, कृतार्थ हो गया, कृतार्थ हो गया। आपको नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है।

यों कहकर वह स्वर्गको चला गया। सच है, सत्पुरुषोंका सङ्ग उत्तम गति प्रदान करनेवाला होता है। इस प्रकार महानुभाव मृगशृङ्ग वैश्यको हाथीकी योनिसे मुक्त करके स्वयं गलेतक पानीमें खड़े हो सूर्यनन्दन यमराजकी स्तुति करने लगे—

ॐ यम, धर्मराज, मृत्यु, अन्तक, वैवस्वत, काल, सर्वभूतक्षय, औदुम्बर, दध्न, नील, परमेष्ठी, वृकोदर, चित्र और चित्रगुप्त—इन चौदह नामोंसे पुकारे जानेवाले भगवान् यमराजको नमस्कार है।

जिनका मुख दाढ़ोंके कारण विकराल प्रतीत होता है और टेढ़ी भौंहोंसे युक्त आँखें क्रूरतापूर्ण जान पड़ती हैं, जिनके शरीरमें ऊपरकी ओर उठे हुए बड़े-बड़े रोम हैं तथा ओठ भी बहुत लम्बे दिखायी देते हैं, ऐसे आप यमराजको नमस्कार है।

आपके अनेक भुजाएँ हैं, अनन्त नख हैं तथा कज्जल-गिरिके समान काला शरीर और भयङ्कर रूप है। आपको नमस्कार है।

भगवन्! आपका वेष बड़ा भयानक है। आप पापियोंको भय देते, कालदण्डसे धमकाते और सब प्रकारके अस्त्र-शस्त्र धारण करते हैं। बहुत बड़ा भैंसा आपका वाहन है। आपके नेत्र दहकते हुए अँगारोंके समान जान पड़ते हैं। आप महान् हैं। मेरु पर्वतके समान आपका विशाल रूप है। आप लाल माला और वस्त्र धारण करते हैं। आपको नमस्कार है।

कल्पान्तके मेघोंकी भाँति जिनकी गम्भीर गर्जना और प्रलयकालीन वायुके समान प्रचण्ड वेग है, जो समुद्रको भी

पी जाते, सम्पूर्ण जगत्‌को ग्रास बना लेते, पर्वतोंको भी चबा जाते और मुखसे आग उगलते हैं, उन भगवान् यमराजको नमस्कार है।

भगवन्! अत्यन्त घोर और अग्निके समान तेजस्वी कालरूप मृत्यु तथा बहुत-से रोग आपके पास सेवामें उपस्थित रहते हैं। आपको नमस्कार है।

आप भयानक मारी और अत्यन्त भयङ्कर महामारीके साथ रहते हैं। पापिष्ठोंके लिये आपका ऐसा ही स्वरूप है। आपको बारम्बार नमस्कार है।

वास्तवमें तो आपका मुख खिले हुए कमलके समान प्रसन्नतासे पूर्ण है। आपके नेत्रोंमें करुणा भरी है। आप पितृस्वरूप हैं। आपको नमस्कार है। आपके केश अत्यन्त कोमल हैं और नेत्र भौंहोंकी रेखासे सुशोभित हैं। मुखके ऊपर मूँछें बड़ी सुन्दर जान पड़ती हैं। पके हुए बिम्बफलके समान लाल ओठ आपकी शोभा बढ़ाते हैं। आप दो भुजाओंसे युक्त, सुवर्णके समान कान्तिमान् और सदा प्रसन्न रहनेवाले हैं। आपको नमस्कार है।

आप सब प्रकारके आभूषणोंसे विभूषित, रत्नमय सिंहासनपर विराजमान, श्वेत माला और श्वेत वस्त्र धारण करनेवाले तथा श्वेत छत्रसे सुशोभित हैं। आपके दोनों ओर दो दिव्य नारियाँ खड़ी होकर हाथोंमें सुन्दर चँवर लिये डुला रही हैं। आपको नमस्कार है।

गलेके रत्नमय हारसे आप बड़े सुन्दर जान पड़ते हैं। रत्नमय कुण्डल आपके कानोंकी शोभा बढ़ाते हैं। आपके हार

और भुजबंद भी रत्नके ही हैं तथा आपके किरीटमें नाना प्रकारके रत्न जड़े हुए हैं। आपकी कृपादृष्टि सीमाका अतिक्रमण कर जाती है। आप मित्रभावसे सबको देखते हैं। सब प्रकारकी सम्पत्तियाँ आपको समृद्धिशाली बनाती हैं। आप सौभाग्यके परम आश्रय हैं तथा धर्म और अधर्मके ज्ञानमें निपुण सभासद् आपकी उपासना करते हैं। आपको नमस्कार है।

संयमनीपुरीकी सभामें शुभ्र रूपवाले धर्म, शुभ लक्षण सत्य, चन्द्रमाके समान मनोहर रूपधारी शम, दूधके समान उज्ज्वल दम तथा वर्णाश्रमजनित विशुद्ध आचार आपके पास मूर्तिमान् होकर सेवामें उपस्थित रहते हैं; आपको नमस्कार है।

आप साधुओंपर सदा स्नेह रखते, वाणीसे उनमें प्राणोंका सञ्चार करते, वचनोंसे सन्तोष देते और गुणोंसे उन्हें सर्वस्व समर्पण करते हैं। सज्जन पुरुषोंपर सदा सन्तुष्ट रहनेवाले आप धर्मराजको बारम्बार नमस्कार है।

जो सबके काल होते हुए भी शुभ कर्म करनेवाले पुरुषोंपर कृपा करते हैं, जो पुण्यात्माओंके हितैषी, सत्पुरुषोंके संगी, संयमनीपुरीके स्वामी, धर्मात्मा तथा धर्मका अनुष्ठान करनेवालोंके प्रिय हैं, उन धर्मराजको नमस्कार है।

जिसकी पीठपर लटके हुए घण्टोंकी ध्वनिसे सारी दिशाएँ गूँज उठती हैं तथा जो ऊँचे-ऊँचे सींगों और फुंकारोंके कारण अत्यन्त भीषण प्रतीत होता है, ऐसे महान् भैंसेपर जो विराजमान रहते हैं तथा जिनकी आठ बड़ी-बड़ी भुजाएँ क्रमशः नाराच, शक्ति, मुसल, खड्ग, गदा, त्रिशूल, पाश और अङ्कुशसे

सुशोभित हैं, उन भगवान् यमराजको प्रणाम है।

जो चौदह सत्पुरुषोंके साथ बैठकर जीवोंके शुभाशुभ कर्मोंका भलीभाँति विचार करते हैं, साक्षियोंद्वारा अनुमोदन कराकर उन्हें दण्ड देते हैं तथा सम्पूर्ण विश्वको शान्त रखते हैं, उन दक्षिण दिशाके स्वामी शान्तस्वरूप यमराजको नमस्कार है।

जो कल्याणस्वरूप, भयहारी, शौच-संतोष आदि नियमोंमें स्थित मनुष्योंके नेत्रोंको प्रिय लगनेवाले, सावर्णि, शनैश्चर और वैवस्वत मनु—इन तीनोंकी माताके सौतेले पुत्र, विवस्वान् (सूर्यदेव)-के आत्मज तथा सदाचारी मनुष्योंको वर देनेवाले हैं, उन भगवान् यमको नमस्कार है।

भगवन्! जब आपके दूत पापी जीवोंको दृढ़तापूर्वक बाँधकर आपके सामने उपस्थित करते हैं तब आप उन्हें यह आदेश देते हैं कि 'इन पापियोंको अनेक घोर नरकोंमें गिराकर छेद डालो, टुकड़े-टुकड़े कर दो, जला दो, सुखा डालो, पीस दो।' इस प्रकारकी बातें कहते हुए यमुनाजीके ज्येष्ठ भ्राता आप यमराजको मेरा प्रणाम है।

जब आप अन्तकरूप धारण करते हैं उस समय आपके गोलाकार नेत्र किनारे-किनारेसे लाल दिखायी देते हैं। आप भीमरूप होकर भय प्रदान करते हैं। टेढ़ी भौंहोंके कारण आपका मुख वक्र जान पड़ता है। आपके शरीरका रंग उस समय नीला हो जाता है तथा आप अपने निर्दयी दूतोंके द्वारा शास्त्रोक्त नियमोंका उल्लङ्घन करनेवाले पापियोंको खूब कड़ाईके साथ धमकाते हैं। आपको सर्वदा नमस्कार है।

जिन्होंने पञ्चमहायज्ञोंका अनुष्ठान किया है तथा जो सदा ही अपने कर्मोंके पालनमें संलग्न रहे हैं, ऐसे लोगोंको दूरसे ही विमानपर आते देख आप दोनों हाथ जोड़े आगे बढ़कर उनका स्वागत करते हैं। आपके नेत्र कमलके समान विशाल हैं तथा आप माता संज्ञाके सुयोग्य पुत्र हैं। आपको मेरा प्रणाम है।

जो सम्पूर्ण विश्वसे उत्कृष्ट, निर्मल, विद्वान्, जगत्‌के पालक, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवके प्रिय, सबके शुभाशुभ कर्मोंके उत्तम साक्षी तथा समस्त संसारको शरण देनेवाले हैं, उन भगवान् यमको नमस्कार है।

वसिष्ठजी कहते हैं—इस प्रकार स्तुति करके मृगशृङ्गने उदारता और करुणाके भण्डार तथा दक्षिण दिशाके स्वामी भगवान् यमका ध्यान करते हुए उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम किया। इससे भगवान् यमको बड़ी प्रसन्नता हुई। वे महान् तेजस्वी रूप धारण किये मुनिके सामने प्रकट हुए। उस समय उनका मुखकमल प्रसन्नतासे खिला हुआ था और किरीट, हार, केयूर तथा मणिमय कुण्डल धारण करनेवाले अनेक सेवक चारों ओरसे उनकी सेवामें उपस्थित थे।

यमराजने कहा—मुने! मैं तुम्हारे इस स्तोत्रसे बहुत सन्तुष्ट हूँ और तुम्हें वर देनेके लिये यहाँ आया हूँ। तुम मुझसे मनोवाञ्छित वर माँगो। मैं तुम्हें अभीष्ट वस्तु प्रदान करूँगा।

उनकी बात सुनकर मुनीश्वर मृगशृङ्ग उठकर खड़े हो गये। यमराजको सामने उपस्थित देख उन्हें बड़ा विस्मय हुआ। उनके नेत्र प्रसन्नतासे खिल उठे। कृतान्तको पाकर

उन्होंने अपनेको सफलमनोरथ समझा और हाथ जोड़कर कहा—'भगवन्! इन कन्याओंको प्राणदान दीजिये। मैं आपसे बारम्बार यही याचना करता हूँ।' मुनिका कथन सुनकर धर्मराजने अदृश्यरूपसे उन ब्राह्मण-कन्याओंको उनके शरीरमें भेज दिया। फिर तो सोकर उठे हुएकी भाँति वे कन्याएँ उठ खड़ी हुईं। अपनी बालिकाओंको सचेत होते देख माताओंको बड़ा हर्ष हुआ। कन्याएँ पहलेकी ही भाँति अपना-अपना वस्त्र पहनकर माताओंको बुला उनके साथ अपने घर गयीं।

वसिष्ठजी कहते हैं—इस प्रकार विप्रवर मृगशृङ्गको वरदान दे यम देवता अपने पार्षदोंके साथ अन्तर्धान हो गये। इधर ब्राह्मण भी यमराजसे वर पाकर बड़ी प्रसन्नताके साथ अपने आश्रमको लौटे। जो मानव प्रतिदिन यमराजकी इस स्तुतिका पाठ करेगा, उसे कभी यम-यातना नहीं भोगनी पड़ेगी, उसके ऊपर यमराज प्रसन्न होंगे, उसकी सन्ततिका कभी अपमृत्युसे पराभव न होगा, उसे इस लोक और परलोकमें भी लक्ष्मीकी प्राप्ति होगी तथा उसे कभी रोगोंका शिकार नहीं होना पड़ेगा।

यमलोकसे लौटी हुई कन्याओंके द्वारा वहाँकी अनुभूत बातोंका वर्णन

राजा दिलीपने पूछा—मुने! यमलोकसे लौटकर आयी हुई उन साध्वी कन्याओंने अपनी माताओं और बन्धुओंसे वहाँका वृत्तान्त कैसा बतलाया? पापियोंकी यातना और पुण्यात्माओंकी गतिके सम्बन्धमें क्या कहा? मैं पुण्य और पापके शुभ और अशुभ फलोंको विस्तारके साथ सुनना चाहता हूँ।

वसिष्ठजी बोले—राजन्! कन्याओंने अपनी माताओं और बन्धुओंसे पुण्य-पापके शुभाशुभ फलोंके विषयमें जो कुछ कहा था, वह ज्यों-का-त्यों तुम्हें बतलाता हूँ।

कन्याओंने कहा—माताओ! यमलोक बड़ा ही घोर और भय उत्पन्न करनेवाला है। वहाँ सर्वदा चारों प्रकारके जीवोंको विवश होकर जाना पड़ता है। गर्भमें रहनेवाले अथवा जन्म लेनेवाले शिशु, बालक, तरुण, अधेड़, बूढ़े, स्त्री, पुरुष और नपुंसक—सभी तरहके जीवोंको वहाँ जाना होता है। वहाँ चित्रगुप्त आदि समदर्शी एवं मध्यस्थ सत्पुरुष मिलकर देहधारियोंके शुभ और अशुभ फलका विचार करते हैं। इस लोकमें जो शुभ कर्म करनेवाले, कोमलहृदय तथा दयालु पुरुष हैं, वे सौम्य मार्गसे यमलोकमें जाते हैं। नाना प्रकारके दान और व्रतोंमें संलग्न रहनेवाले स्त्री-पुरुषोंसे सूर्यनन्दन यमकी नगरी भरी है। माघस्नान करनेवाले लोग वहाँ विशेषरूपसे

शोभित होते हैं। धर्मराज उनका अधिक सम्मान करते हैं। वहाँ उनके लिये सब प्रकारकी भोगसामग्री सुलभ होती है। माघस्नानमें मन लगानेवाले लोगोंके सैकड़ों, हजारों विचित्र-विचित्र विमान वहाँ शोभा पाते हैं। इन पुण्यात्मा जीवोंको विमानपर बैठकर आते देख सूर्यनन्दन यम अपने आसनसे उठकर खड़े हो जाते हैं और अपने पार्षदोंके साथ जाकर उन सबकी अगवानी करते हैं। फिर स्वागतपूर्वक आसन दे, पाद्य-अर्घ्य आदि निवेदन कर प्रिय वचनोंमें कहते हैं—'आपलोग अपने आत्माका कल्याण करनेवाले महात्मा हैं, अतएव धन्य हैं; क्योंकि आपने दिव्य सुखकी प्राप्तिके लिये पुण्यका उपार्जन किया है। अत: आप इस विमानपर बैठकर स्वर्गको जाइये। स्वर्गलोककी कहीं तुलना नहीं है, वह सब प्रकारके दिव्य भोगोंसे परिपूर्ण है।' इस प्रकार उनकी अनुमति ले पुण्यात्मा पुरुष स्वर्गलोकमें जाते हैं।

माताओ तथा बन्धुजन! अब हम वहाँके पापी जीवोंके कष्टका वर्णन करती हैं, आप सब लोग धैर्य धारण करके सुनें। जो क्रूरतापूर्ण कर्म करनेवाले और दान न देनेवाले पापी जीव हैं, वे वहाँ यमराजके घरमें अत्यन्त भयंकर दक्षिणमार्गसे जाते हैं। यमराजका नगर अनेक रूपोंमें स्थित है, उसका विस्तार चारों ओरसे छियासी हजार योजन समझना चाहिये। पुण्यकर्म करनेवाले पुरुषोंको वह बहुत निकट-सा जान पड़ता है, किन्तु भयंकर मार्गसे जानेवाले पापी जीवोंके लिये वह अत्यन्त दूर है। वह मार्ग कहीं तो तीखे काँटोंसे भरा होता है और कहीं रेत एवं कंकड़ोंसे। कहीं पत्थरोंके ऐसे

टुकड़े बिछे होते हैं, जिनका किनारा छुरोंकी धारके समान तीखा होता है। कहीं बहुत दूरतक कीचड़-ही-कीचड़ भरी रहती है। कहीं घातक अङ्कुर उगे होते हैं और कहीं-कहीं लोहेकी सुईके समान नुकीले कुशोंसे सारा मार्ग ढका होता है। इतना ही नहीं, कहीं-कहीं बीच रास्तेमें वृक्षोंसे भरे हुए पर्वत होते हैं, जो किनारेपर भारी जल-प्रपातके कारण अत्यन्त दुर्गम जान पड़ते हैं। कहीं रास्तेपर दहकते हुए अँगारे बिछे रहते हैं। ऐसे मार्गसे पापी जीवोंको दुःखित होकर जाना पड़ता है। कहीं ऊँचे-नीचे गड्ढे, कहीं फिसला देनेवाले चिकने ढेले, कहीं खूब तपी हुई बालू और कहीं तीखी कीलोंसे वह मार्ग व्याप्त रहता है। कहीं-कहीं अनेक शाखाओंमें फैले हुए सैकड़ों वन और दुःखदायी अन्धकार हैं, जहाँ कोई सहारा देनेवाला भी नहीं रहता। कहीं तपे हुए लोहेके काँटेदार वृक्ष, कहीं दावानल, कहीं तपी हुई शिला और कहीं हिमसे वह मार्ग आच्छादित रहता है। कहीं ऐसी बालू भरी रहती है, जिसमें चलनेवाला जीव कण्ठतक धँस जाता है और बालू कानके पासतक आ जाती है। कहीं गरम जल और कहीं कंडोंकी आगसे यमलोकका मार्ग व्याप्त रहता है। कहीं धूल मिली हुई प्रचण्ड वायुका बवंडर उठता है और कहीं बड़े-बड़े पत्थरोंकी वर्षा होती है। उन सबकी पीड़ा सहते हुए पापी जीव यमलोकमें जाते हैं। रेतकी भारी वृष्टिसे सारा अङ्ग भर जानेके कारण पापी जीव रोते हैं। महान् मेघोंकी भयङ्कर गर्जनासे वे बारम्बार थर्रा उठते हैं। कहीं तीखे अस्त्र-शस्त्रोंकी वर्षा होती है, जिससे उनके सारे शरीरमें घाव हो जाते हैं।

तत्पश्चात् उनके ऊपर नमक मिले हुए पानीकी मोटी धाराएँ बरसायी जाती हैं। इस प्रकार कष्ट सहन करते हुए उन्हें जाना पड़ता है। कहीं अत्यन्त ठंडी, कहीं रूखी और कहीं कठोर वायुका सब ओरसे आघात सहते हुए पापी जीव सूखते और रोते हैं। इस प्रकार वह मार्ग बड़ा ही भयङ्कर है। वहाँ राहखर्च नहीं मिलता। कोई सहारा देनेवाला नहीं रहता। वह सब ओरसे दुर्गम और निर्जन है। वहाँ और कोई मार्ग आकर नहीं मिला है। वह बहुत बड़ा और आश्रयरहित है। वहाँ अन्धकार-ही-अन्धकार भरा रहता है। वह महान् कष्टप्रद और सब प्रकारके दुःखोंका आश्रय है। ऐसे ही मार्गसे यमकी आज्ञाका पालन करनेवाले अत्यन्त भयङ्कर यमदूतोंद्वारा समस्त पाप-परायण मूढ़ जीव बलपूर्वक लाये जाते हैं।

वे एकाकी, पराधीन तथा मित्र और बन्धु-बान्धवोंसे रहित होते हैं। अपने कर्मोंके लिये बारम्बार शोक करते और रोते हैं। उनका आकार प्रेत-जैसा होता है। उनके शरीरपर वस्त्र नहीं रहता। कण्ठ, ओठ और तालू सूखे होते हैं। वे शरीरसे दुर्बल और भयभीत होते हैं तथा क्षुधाकी आगसे जलते रहते हैं। बलोन्मत्त यमदूत किन्हीं-किन्हीं पापी मनुष्योंको चित सुलाकर उनके पैरोंमें साँकल बाँध देते हैं और उन्हें घसीटते हुए खींचते हैं। कितने ही दूसरे जीव ललाटमें अङ्कुश चुभाये जानेके कारण क्लेश भोगते हैं। कितनोंकी बाँहें पीठकी ओर घुमाकर बाँध दी जाती और उनके हाथोंमें कील ठोंक दी जाती है; साथ ही पैरोंमें बेड़ी भी पड़ी होती है। इस दशामें भूखका कष्ट सहन करते हुए उन्हें जाना पड़ता

है। कुछ दूसरे जीवोंके गलेमें रस्सी बाँधकर उन्हें पशुओंकी भाँति घसीटा जाता है और वे अत्यन्त दुःख उठाते रहते हैं। कितने ही दुष्ट मनुष्योंकी जिह्वामें रस्सी बाँधकर उन्हें खींचा जाता है। किन्हींकी कमरमें भी रस्सी बाँधी जाती है और उन्हें गरदनियाँ देकर इधर-उधर ढकेला जाता है। यमदूत किन्हींकी नाक बाँधकर खींचते हैं और किन्हींके गाल तथा ओठ छेदकर उनमें रस्सी डाल देते और उन्हें खींचकर ले जाते हैं। तपे हुए सींकचोंसे कितने ही पापियोंके पेट छिदे होते हैं। कुछ लोगोंके कानों और ठोढ़ियोंमें छेद करके उनमें रस्सी डालकर खींचा जाता है। किन्हींके पैरों और हाथोंके अग्रभाग काट लिये जाते हैं। किन्हींके कण्ठ, ओठ और तालुओंमें छेद कर दिया जाता है। किन्हीं-किन्हींके अण्डकोश कट जाते हैं और कुछ लोगोंके समस्त अङ्गोंकी सन्धियाँ काट दी जाती हैं। किन्हींको भालोंसे छेदा जाता है, कुछ बाणोंसे घायल किये जाते हैं और कुछ लोगोंको मुद्गरों तथा लोहेके डंडोंसे बारम्बार पीटा जाता है और वे निराश्रय होकर चीखते-चिल्लाते हुए इधर-उधर भागा करते हैं। प्रज्वलित अग्निके समान कान्तिवाले भाँति-भाँतिके भयङ्कर आरों और भिन्दिपालोंसे उन्हें विदीर्ण किया जाता है और वे पापी जीव पीब तथा रक्त बहाते हुए घावसे पीड़ित होते और कीड़ोंसे डँसे जाते हैं। इस प्रकार उन्हें विवश करके यमलोकमें ले जाया जाता है। वे भूख-प्यासससे पीड़ित होकर अन्न और जल माँगते हैं, धूपसे बचनेको छायाके लिये प्रार्थना करते हैं और शीतसे व्यथित होकर तापनेके लिये अग्नि माँगते हैं। जिन्होंने उक्त

वस्तुओंका दान नहीं किया होता, वे उस पाथेयरहित पथपर इसी प्रकार कष्ट सहते हुए यात्रा करते हैं। इस प्रकार अत्यन्त दु:खमय मार्गसे चलकर जब वे प्रेतलोकमें पहुँचते हैं तब दूत उन्हें यमराजके आगे उपस्थित करते हैं। उस समय वे पापी जीव यमराजको भयानक रूपमें देखते हैं। वहाँ असंख्यों भयानक यमदूत, जो काजलके समान काले, महान् वीर और अत्यन्त क्रूर होते हैं, हाथोंमें सब प्रकारके अस्त्र-शस्त्र लिये मौजूद रहते हैं। ऐसे ही परिवारके साथ बैठे हुए यमराज तथा चित्रगुप्तको पापी जीव अत्यन्त भयङ्कर रूपमें देखते हैं।

उस समय भगवान् यमराज और चित्रगुप्त उन पापियोंको धर्मयुक्त वाक्योंसे समझाते हुए बड़े जोर-जोरसे फटकारते हैं। वे कहते हैं—'ओ खोटे कर्म करनेवाले पापियो! तुमने दूसरोंके धन हड़प लिये हैं और सुन्दर रूपके घमण्डमें आकर परायी स्त्रियोंके साथ व्यभिचार किया है। मनुष्य अपने-आप जो कुछ कर्म करता है, उसे स्वयं ही भोगता है; फिर तुमने अपने ही भोगनेके लिये पापकर्म क्यों किया? और अब अपने कर्मोंकी आगमें जलकर इस समय तुमलोग संतप्त क्यों हो रहे हो? भोगो अपने उन कर्मोंको। इसमें दूसरे किसीका दोष नहीं है। ये राजालोग भी अपने भयंकर कर्मोंसे प्रेरित हो मेरे पास आये हैं; इन्हें अपनी खोटी बुद्धि और बलका बड़ा घमण्ड था। अरे, ओ दुराचारी राजाओ! तुमलोग प्रजाका सर्वनाश करनेवाले हो। अरे, थोड़े समयतक रहनेवाले राज्यके लिये तुमने पाप क्यों किया? राज्यके लोभमें पड़कर मोहवश बलपूर्वक अन्यायसे जो तुमने प्रजाजनोंको दण्ड

दिया है, इस समय उसका फल भोगो। कहाँ है वह राज्य और कहाँ गयी वह रानी, जिसके लिये तुमने पापकर्म किया था? अब तो सबको छोड़कर तुम अकेले ही यहाँ खड़े हो। यहाँ वह बल नहीं दिखायी देता, जिससे तुमने प्रजाओंका विध्वंस किया। इस समय यमदूतोंकी मार पड़नेपर कैसा लग रहा है?' इस तरह नाना प्रकारके वचनोंद्वारा यमराजके उलाहना देनेपर वे राजा अपने-अपने कर्मोंको सोचते हुए चुपचाप खड़े रह जाते हैं।

इस प्रकार राजाओंसे धर्मकी बात कहकर धर्मराज उनके पापपङ्ककी शुद्धिके लिये अपने दूतोंसे इस प्रकार कहते हैं— 'ओ चण्ड! ओ महाचण्ड!! तुम इन राजाओंको पकड़कर ले जाओ और क्रमशः नरककी आगमें डालकर इन्हें पापोंसे शुद्ध करो।' तब वे दूत शीघ्र ही उठकर राजाओंके पैर पकड़ लेते हैं और उन्हें बड़े वेगसे आकाशमें घुमाकर ऊपर फेंकते हैं। तत्पश्चात् उन्हें पूरा बल लगाकर तपायी हुई शिलापर बड़े वेगसे पटकते हैं, मानो किसी महान् वृक्षपर वज्रसे प्रहार करते हों। शिलापर गिरनेसे उनका शरीर चूर-चूर हो जाता है, रक्तके स्रोत बहने लगते हैं और जीव अचेत एवं निश्चेष्ट हो जाता है। तदनन्तर वायुका स्पर्श होनेपर वह धीरे-धीरे फिर साँस लेने लगता है। उसके बाद पापकी शुद्धिके लिये उसे नरकके समुद्रमें डाल दिया जाता है। इस पृथ्वीके नीचे नरककी अट्ठाईस कोटियाँ हैं। वे सातवें तलके अन्तमें भयङ्कर अन्धकारके भीतर स्थित हैं। उनमें पहली कोटिका नाम घोरा है। उसके नीचे सुघोराकी स्थिति है। तीसरी अतिघोरा, चौथी

महाघोरा और पाँचवीं कोटि घोररूपा है। छठीका नाम तरलतारा, सातवींका भयानका, आठवींका कालरात्रि और नवींका भयोत्कटा है। उसके नीचे दसवीं कोटि चण्डा है। उसके भी नीचे महाचण्डा है। बारहवींका नाम चण्डकोलाहला है। उसके बाद प्रचण्डा, नरनायिका, कराला, विकराला और वज्रा है। [तीन अन्य नरकोंके साथ] वज्राकी बीसवीं संख्या है। इनके सिवा त्रिकोणा, पञ्चकोणा, सुदीर्घा, परिवर्तुला, सप्तभौमा, अष्टभौमा, दीप्ता और माया—ये आठ और हैं। इस प्रकार नरककी कुल अट्ठाईस कोटियाँ बतायी गयी हैं।

उपर्युक्त कोटियोंमेंसे प्रत्येकके पाँच-पाँच नायक हैं। उनके नाम सुनो। उनमें पहला रौरव है, जहाँ देहधारी जीव रोते हैं। दूसरा महारौरव है, जिसकी पीड़ाओंसे बड़े-बड़े जीव भी रो देते हैं। तीसरा तम, चौथा शीत और पाँचवाँ उष्ण है। ये प्रथम कोटिके पाँच नायक माने गये हैं। इनके सिवा सुघोर, सुतम, तीक्ष्ण, पद्म, सञ्जीवन, शठ, महामाय, अतिलोम, सुभीम, कटङ्कट, तीव्रवेग, कराल, विकराल, प्रकम्पन, महापद्म, सुचक्र, कालसूत्र, प्रतर्दन, सूचीमुख, सुनेमि, खादक, सुप्रदीपक, कुम्भीपाक, सुपाक, अतिदारुणकूप, अङ्गारराशि, भवन, असृक्पूयह्रद, विरामय, तुण्डशकुनि, महासंवर्तक, क्रतु, तप्तजतु, पङ्कलेप, पूतिमांस, द्रव, त्रपु, उच्छ्वास, निरुच्छ्वास, सुदीर्घ, कूटशाल्मलि, दुरिष्ट, सुमहानाद, प्रभाव, सुप्रभावन, ऋक्ष, मेष, वृष, शल्य, सिंहानन, व्याघ्रानन, मृगानन, सूकरानन, श्वानन, महिषानन, वृकानन, मेषवरानन, ग्राह, कुम्भीर, नक्र, सर्प, कूर्म, वायस, गृध्र, उलूक, जलूका, शार्दूल, कपि, कर्कट,

गण्ड, पूतिवक्त्र, रक्ताक्ष, पूतिमृत्तिक, कणाधूम, तुषाग्नि, कृमिनिचय, अमेय, अप्रतिष्ठ, रुधिरान्न, श्वभोजन, लालाभक्ष, आत्मभक्ष, सर्वभक्ष, सुदारुण, सङ्कष्ट, सुबिलास, सुकट, संकट, कट, पुरीष, कटाह, कष्टदायिनी वैतरणी नदी, सुतप्त लोहशङ्कु, अय:शङ्कु, प्रपूरण, घोर, असितालवन, अस्थिभङ्ग, प्रपीड़क, नीलयन्त्र, अतसीयन्त्र, इक्षुयन्त्र, कूट, अंशप्रमर्दन, महाचूर्णी, सुचूर्णी, तप्तलोहमयी शिला, क्षुरधाराभपर्वत, मलपर्वत, मूत्रकूप, विष्ठाकूप, अन्धकूप, पूयकूप, शातन, मुसलोलूखल, यन्त्रशिला, शकटलाङ्गल, तालपत्रासिवन, महामशकमण्डप, सम्मोहन, अतिभङ्ग, तप्तशूल, अयोगुड, बहुदु:ख, महादु:ख, कश्मल, शमल, हालाहल, विरूप, भीमरूप, भीषण, एकपाद, द्विपाद, तीव्र तथा अवीचि। यह अवीचि अन्तिम नरक है। इस प्रकार ये क्रमश: पाँच-पाँचके अट्ठाईस समुदाय माने गये हैं। एक-एक समुदाय एक-एक कोटिका नायक है।

रौरवसे लेकर अवीचितक कुल एक सौ चालीस नरक माने गये हैं। इन सबमें पापी मनुष्य अपने-अपने कर्मोंके अनुसार डाले जाते हैं और जबतक भाँति-भाँतिकी यातनाओंद्वारा उनके कर्मोंका भोग समाप्त नहीं हो जाता तबतक वे उसीमें पड़े रहते हैं। जैसे सुवर्ण आदि धातु जबतक उनकी मैल न जल जाय तबतक आगमें तपाये जाते हैं, उसी प्रकार पापी पुरुष पापक्षय होनेतक नरकोंकी आगमें शुद्ध किये जाते हैं। इस प्रकार क्लेश सहकर जब ये प्राय: शुद्ध हो जाते हैं तब शेष कर्मोंके अनुसार पुन: इस पृथ्वीपर आकर जन्म ग्रहण करते हैं। तृण और झाड़ी आदिके भेदसे नाना प्रकारके

स्थावर होकर वहाँके दु:ख भोगनेके पश्चात् पापी जीव कीड़ोंकी योनिमें जन्म लेते हैं। फिर कीटयोनिसे निकलकर क्रमश: पक्षी होते हैं। पक्षीरूपसे कष्ट भोगकर मृगयोनिमें उत्पन्न होते हैं। वहाँके दु:ख भोगकर अन्य पशुयोनिमें जन्म लेते हैं। फिर क्रमश: गोयोनिमें आकर मरनेके पश्चात् मनुष्य होते हैं।

माताओ! हमने यमलोकमें इतना ही देखा है। वहाँ पापीको बड़ी भयानक यातनाएँ होती हैं। वहाँ ऐसे-ऐसे नरक हैं जो न कभी देखे गये थे और न कभी सुने ही गये थे। वह सब हमलोग न तो जान सकती हैं और न देख ही सकती हैं।

माताएँ बोलीं—बस, बस, इतना ही बहुत हुआ। अब रहने दो। इन नरक-यातनाओंको सुनकर हमारे सारे अङ्ग शिथिल हो गये हैं। हृदयमें भय छा गया है। बारम्बार उनकी याद आ जानेसे हमारा मन सुध-बुध खो बैठता है। आन्तरिक भयके उद्रेकसे हमलोगोंके शरीरमें रोमाञ्च हो आया है।

कन्याओंने कहा—माताओ! इस परम पवित्र भारतवर्षमें जो हमें जन्म मिला है, यह अत्यन्त दुर्लभ है। इसमें भी हजार-हजार जन्म लेनेके बाद पुण्यराशिके सञ्चयसे कदाचित् कभी जीव मनुष्ययोनिमें जन्म पाता है; परन्तु जो माघस्नानमें तत्पर रहनेवाले हैं, उनके लिये कुछ भी दुर्लभ नहीं है। उन्हें यहाँ ही परम मोक्ष मिल जाता है और पर्याप्त भोगसामग्री भी सुलभ होती है। भारतवर्षको कर्मभूमि कहा गया है। अन्य जितनी भूमियाँ हैं वे भोगभूमि मानी जाती हैं। यहाँ यति तपस्या और याजक यज्ञ करते हैं तथा यहीं पारलौकिक सुखके लिये श्रद्धापूर्वक दान दिये जाते हैं। कितने ही धन्य

पुरुष यहीं माघस्नान करते तथा तपस्या करके अपने कर्मोंके अनुसार ब्रह्मा, इन्द्र, देवता और मरुद्गणोंका पद प्राप्त करते हैं। यह भारतवर्ष सभी देशोंसे श्रेष्ठ माना गया है; क्योंकि यहीं मनुष्य धर्म तथा स्वर्ग और मोक्षकी सिद्धि कर सकते हैं। इस पवित्र भारतदेशमें क्षणभङ्गुर मानवजीवनको पाकर जो अपने आत्माका कल्याण नहीं करता, उसने अपने-आपको ठग लिया। मनुष्योंमें भी अत्यन्त दुर्लभ ब्राह्मणत्वको पाकर जो अपना कल्याण नहीं करता, उससे बढ़कर मूर्ख कौन होगा। कितने ही कालके बाद जीव अत्यन्त दुर्लभ मानवजीवन प्राप्त करता है; इसे पाकर ऐसा करना चाहिये जिससे कभी नरकमें न जाना पड़े। देवतालोग भी यह अभिलाषा करते हैं कि हमलोग कब भारतवर्षमें जन्म लेकर माघमासमें प्रातःकाल किसी नदी या सरोवरके जलमें गोते लगायेंगे। देवता यह गीत गाते हैं कि जो लोग देवत्वके पश्चात् स्वर्ग और मोक्षकी प्राप्तिके मार्गभूत भारतवर्षके भूभागमें मनुष्य-जन्म धारण करते हैं, वे धन्य हैं। हम नहीं जानते कि स्वर्गकी प्राप्ति करानेवाले अपने पुण्यकर्मके क्षीण होनेपर किस देशमें हमें पुनः देह धारण करना होगा। जो भारतवर्षमें जन्म लेकर सब इन्द्रियोंसे युक्त हैं—किसी भी इन्द्रियसे हीन नहीं हैं, वे ही मनुष्य धन्य हैं; अतः माताओ! तुम भय मत करो, भय मत करो। आदरपूर्वक धर्मका अनुष्ठान करो। जिनके पास दानरूपी राहखर्च होता है, वे यमलोकके मार्गपर सुखसे जाते हैं; अन्यथा उस पाथेयरहित पथपर जीवको क्लेश भोगना पड़ता है। ऐसा जानकर मनुष्य पुण्य करे और पाप छोड़ दे। पुण्यसे

देवत्वकी प्राप्ति होती है और अधर्मसे नरकमें गिरना पड़ता है। जो किञ्चित् भी देवेश्वर भगवान् श्रीहरिकी शरणमें गये हैं, वे भयङ्कर यमलोकका दर्शन नहीं करते।

बान्धवो! यदि तुमलोग संसार-बन्धनसे छुटकारा पाना चाहते हो तो सच्चिदानन्दस्वरूप परमदेव श्रीनारायणकी आराधना करो। यह चराचर जगत् आपलोगोंकी भावना—संकल्पसे ही निर्मित है, इसे बिजलीकी तरह चञ्चल—क्षणभङ्गुर समझकर श्रीजनार्दनका पूजन करो। अहंकार विद्युत्की रेखाके समान व्यर्थ है, इसे कभी पास न आने दो। शरीर मृत्युसे जुड़ा हुआ है, जीवन भी चञ्चल है, धन राजा आदिसे प्राप्त होनेवाली बाधाओंसे परिपूर्ण है तथा सम्पत्तियाँ क्षणभङ्गुर हैं। माताओ! क्या तुम नहीं जानतीं, आधी आयु तो नींदमें चली जाती है! कुछ आयु भोजन आदिमें समाप्त हो जाती है। कुछ बालकपनमें, कुछ बुढ़ापेमें और कुछ विषय-भोगोंके सेवनमें ही बीत जाती है; फिर कितनी आयु लेकर तुम धर्म करोगी। बचपन और बुढ़ापेमें तो भगवान्के पूजनका अवसर नहीं प्राप्त होता; अतः इसी अवस्थामें अहङ्कारशून्य होकर धर्म करो। संसाररूपी भयङ्कर गड्ढेमें गिरकर नष्ट न हो जाओ। यह शरीर मृत्युका घर है तथा आपत्तियोंका सर्वश्रेष्ठ स्थान है; इतना ही नहीं, यह रोगोंका भी निवासस्थान है और मल आदिसे भी अत्यन्त दूषित रहता है। माताओ! फिर किसलिये इसे स्थिर समझकर तुम पाप करती हो। यह संसार निःसार है और नाना प्रकारके दुःखोंसे भरा है। इसपर विश्वास नहीं करना चाहिये; क्योंकि एक दिन तुम्हारा निश्चय ही नाश होनेवाला है। बान्धवो! तुम

सब लोग सुनो। हम बिलकुल सच्ची बात बता रही हैं। शरीरका नाश बिलकुल निकट है; अतः श्रीजनार्दनका पूजन अवश्य करना चाहिये। सदा ही श्रीविष्णुकी आराधना करते रहो। यह मानव-जीवन अत्यन्त दुर्लभ है। बन्धुओ! स्थावर आदि योनियोंमें अरबों-खरबों बार भटकनेके बाद किसी तरह मनुष्यका शरीर प्राप्त होता है। मनुष्य होनेपर भी देवताओंके पूजन और दानमें मन लगना तो और भी कठिन है। माताओ! योगबुद्धि सबसे दुर्लभ है। जो दुर्लभ मनुष्य-शरीरको पाकर सदा ही श्रीहरिका पूजन नहीं करता, वह आप ही अपना विनाश करता है। उससे बढ़कर मूर्ख कौन होगा? तुमलोग दम्भका आचरण छोड़कर चक्रसुदर्शनधारी भगवान् विष्णुकी पूजा करो। हमलोग बारम्बार भुजाएँ उठाकर तुम्हारे हितकी बात कहती हैं। सर्वथा भक्तिपूर्वक भगवान् विष्णुका पूजन करना चाहिये और मनुष्योंके साथ ईर्ष्याका भाव छोड़ देना चाहिये। सबके धारण करनेवाले जगदीश्वर भगवान् अच्युतकी आराधना किये बिना संसार-सागरमें डूबे हुए तुम सब लोग कैसे पार जाओगे? माताओ! अधिक कहनेकी क्या आवश्यकता? हमारी यह बात सुनो—जो प्रतिदिन तन्मय होकर भगवान् गोविन्दके गुणोंका गान तथा नामोंका सङ्कीर्तन सुनते हैं, उन्हें वेदोंसे, तपस्यासे, शास्त्रोक्त दक्षिणावाले यज्ञोंसे, पुत्र और स्त्रियोंसे, संसारके कृत्योंसे तथा घर, खेत और बन्धु-बान्धवोंसे क्या लेना है? इसलिये तुमलोग भय छोड़कर श्रीकेशवकी आराधना करो। शालग्रामशिलाका निर्मल एवं शुद्ध चरणामृत पीओ तथा भगवान् विष्णुके दिन—एकादशीको

उपवास किया करो।

जब सूर्य मकर राशिपर स्थित हों, उस समय प्रतिदिन प्रात:काल स्नान करो; साथ ही पतिकी सेवामें लगी रहो। नरकका भय तो तुम्हें दूरसे ही छोड़ देना चाहिये; क्योंकि सब पापोंका नाश करनेवाली परम पवित्र एकादशी तिथि प्रत्येक पक्षमें आती है। फिर तुम्हें नरकसे भय क्यों हो रहा है? घरसे बाहरके जलमें स्नान करनेसे पुण्य प्रदान करनेवाला माघमास भी प्रतिवर्ष आया करता है। फिर तुम्हें नरकसे भय क्यों होता है?

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! वे कन्याएँ अपनी माताओंसे इस प्रकार कहकर पुन: माघस्नान, उपवास आदि व्रत, धर्म तथा दान करने लगीं।

महात्मा पुष्करके द्वारा नरकमें पड़े हुए जीवोंका उद्धार

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! माघस्नान और उपवास आदि महान् पुण्य करनेवाले मनुष्य इसी प्रकार दिव्य लोकोंमें जाते-आते रहते हैं। पुण्य ही सर्वत्र आने-जानेमें कारण है। पूर्वकालमें विप्रवर पुष्कर भी यमलोकमें गये थे और वहाँ बहुत-से नारकीय जीवोंको नरकसे निकालकर फिर यहीं आ पूर्ववत् अपने घरमें रहने लगे। त्रेतायुगमें जब भगवान् श्रीरामचन्द्रजी राज्य करते थे, तभी एक समय किसी ब्राह्मणका पुत्र मरकर यमलोकमें गया और पुनः वह जी उठा। क्या यह बात तुमने नहीं सुनी है? देवकीनन्दन श्रीकृष्णने अपने गुरु सान्दीपनिके पुत्रको, जिसे बहुत दिन पहले ही ग्राहने अपना ग्रास बना लिया था, पुनः यमलोकसे ले आकर गुरुको अर्पण किया था। इसी प्रकार और भी कई मनुष्य यमलोकसे लौट आये हैं। इस विषयमें सन्देह नहीं करना चाहिये। अच्छा बताओ, अब और क्या सुनना चाहते हो?

दिलीपने पूछा—मुने! पुष्कर नामक श्रेष्ठ ब्राह्मण कहाँके रहनेवाले थे? वे कैसे यमलोकमें आये और किस प्रकार उन्होंने नरकसे पापियोंका उद्धार किया?

वसिष्ठजी बोले—राजन्! मैं महात्मा पुष्करके चरित्रका वर्णन करता हूँ। वह सब पापोंका नाश करनेवाला है। तुम सावधान होकर सुनो। बुद्धिमान् पुष्कर नन्दिग्रामके निवासी थे। वे सदा अपने धर्मके अनुष्ठानमें लगे रहनेवाले और सब

प्राणियोंके हितैषी थे। सदा माघस्नान और स्वाध्यायमें तत्पर रहते तथा समयपर अनन्य भावसे श्रीविष्णुकी आराधना किया करते थे। महायोगी पुष्कर अपने कुटुम्बके साथ रहते और नित्य अग्निहोत्र करते थे। राजन्, वे अप्रमेय! हरे! विष्णो! कृष्ण! दामोदर! अच्युत! गोविन्द! अनन्त! देवेश्वर! इत्यादि रूपसे केवल भगवन्नामोंका कीर्तन करते थे। महामते! देवताका आराधन छोड़कर और किसी काममें उन ब्राह्मण देवताका मन स्वप्नमें भी नहीं लगता था। एक दिन सूर्यनन्दन यमराजने अपने भयङ्कर दूतोंको आज्ञा दी—'जाओ, नन्दिग्राम-निवासी पुष्कर नामक ब्राह्मणको यहाँ पकड़ ले आओ।' यह आदेश सुनकर और यमराजके बताये हुए पुष्करको न पहचानकर वे इन महात्मा पुष्करको ही यमलोकमें पकड़ लाये। ब्राह्मण पुष्करको आते देख यमराज मन-ही-मन भयभीत हो गये और आसनसे उठकर खड़े हो गये। फिर मुनिको आसनपर बिठाकर उन्होंने दूतोंको फटकारा—'तुमलोगोंने यह क्या किया? मैंने तो दूसरे पुष्करको लानेके लिये कहा था। तुमलोगोंके कितने पापपूर्ण विचार हैं। भला, इन सब धर्मोंके ज्ञाता, विशेषतः भगवान् विष्णुके भक्त, सदा माघस्नान करनेवाले और उपवास-परायण महात्मा पुरुषको यहाँ मेरे समीप क्यों ले आये?'

दूतोंको इस प्रकार डाँट बताकर प्रेतराज यमने पुष्करसे कहा—'ब्रह्मन्! तुम्हारे पुत्र और स्त्री आदि सब बान्धव बहुत व्याकुल होकर रो रहे हैं; अतः तुम भी अभी जाओ।' तब पुष्करने यमसे कहा—'भगवन्! जहाँ पापी पुरुष यातनामय शरीर धारण करके कष्ट भोगते हैं, उन सब नरकोंको मैं

देखना चाहता हूँ। यह सुनकर सूर्यकुमार यमने पुष्करको सैकड़ों और हजारों नरक दिखलाये। पुष्करने देखा, पापी जीव नरकोंमें पड़कर बड़ा कष्ट भोगते हैं। कोई शूलीपर चढ़े हैं, किन्हींको व्याघ्र खा रहा है जिससे वे अत्यन्त दुःखित हैं। कोई तपी हुई बालूपर जल रहे हैं। किन्हींको कीड़े खा रहे हैं। कोई जलते हुए घड़ेमें डाल दिये गये हैं। कोई कीड़ोंसे पीड़ित हैं। कोई असिपत्रवनमें दौड़ रहे हैं, जिससे उनके अङ्ग छिन्न-भिन्न हो रहे हैं। किन्हींको आरोंसे चीरा जा रहा है। कोई कुल्हाड़ोंसे काटे जाते हैं। किन्हींको खारी कीचड़में कष्ट भोगना पड़ता है। किन्हींको सूई चुभो-चुभोकर गिराया जाता है और कोई सर्दीसे पीड़ित हो रहे हैं। उनको तथा अन्य जीवोंको नरकमें पड़कर यातना भोगते देख पुष्करको बड़ा दुःख हुआ। वे उनसे बोले—'क्या आपलोगोंने पूर्वजन्ममें कोई पुण्य नहीं किया था, जिससे यहाँ यातनामें पड़कर आप सदा दुःख भोगते हैं?'

नरकके जीवोंने कहा—विप्रवर! हमने पृथ्वीपर कोई पुण्य नहीं किया था। इसीसे इस यातनामें पड़कर जलते और बहुत कष्ट उठाते हैं। हमने परायी स्त्रियोंसे अनुराग किया, दूसरोंके धन चुराये, अन्य जीवोंकी हिंसा की, बिना अपराध ही दूसरोंपर लाञ्छन लगाये, ब्राह्मणोंकी निन्दा की और जिनके भरण-पोषणका भार अपने ऊपर था, उनके भोजन किये बिना ही हम सबसे पहले भोजन कर लेते थे। इन्हीं सब पापोंके कारण हमलोग इस नरकाग्निमें दग्ध हो रहे हैं। प्यासी गौएँ जब जलकी ओर दौड़ती हुई जातीं तो हम सदा उनके पानी पीनेमें विघ्न डाल दिया करते थे। गौओंको कभी

खिलाते-पिलाते नहीं थे, तो भी उनका दूध दुहकर पेट पालनेमें लगे रहते थे। याचकोंको दान देनेमें लगे हुए धार्मिक पुरुषोंके कार्यमें रोड़े अटकाया करते थे। अपनी स्त्रियोंको त्याग दिया था। व्रतसे भ्रष्ट हो गये थे। दूसरेके अन्नमें ही सदा रुचि रखते थे। पर्वोंपर भी स्त्रियोंके साथ रमण करते थे। ब्राह्मणोंको देनेकी प्रतिज्ञा करके भी लोभवश उन्हें दान नहीं दिया। हम धरोहर हड़प लेते थे, मित्रोंसे द्रोह करते तथा झूठी गवाही देते रहते थे। इन्हीं सब पापोंके कारण आज हम दग्ध हो रहे हैं।

पुष्करने कहा—क्या आपलोगोंने भगवान् जनार्दनका एक बार भी पूजन नहीं किया? इसीसे आप ऐसी भयानक दशाको पहुँचे हैं। जिन्होंने समस्त लोकोंके स्वामी भगवान् पुरुषोत्तमका पूजन किया है, उन मनुष्योंका मोक्षतक हो सकता है; फिर पापक्षयकी तो बात ही क्या है? प्राय: आपलोगोंने श्रीपुरुषोत्तमके चरणोंमें मस्तक नहीं झुकाया है। इसीसे आपको इस अत्यन्त भयङ्कर नरककी प्राप्ति हुई है। अब यहाँ हाहाकार करनेसे क्या लाभ? निरन्तर भगवान् श्रीहरिका स्मरण कीजिये। वे श्रीविष्णु समस्त पापोंका नाश करनेवाले हैं। मैं भी यहाँ जगदीश्वरके नामोंका कीर्तन करता हूँ। वे नाम निश्चय ही आपका कल्याण करेंगे।

नरकके जीवोंने कहा—ब्रह्मन्! हमारा अन्तःकरण अपवित्र है। हम अपने पापसे सन्तप्त हैं। ऐसे समयमें आपके शरीरको छूकर बहनेवाली वायु हमें परम आनन्द प्रदान करती है। धर्मात्मन्! आप कुछ देरतक यहाँ ठहरिये, जिससे हम दुःखी जीवोंको क्षणभर भी तो सुख मिल सके। ब्रह्मन्! आपके

दर्शनसे भी हमें बड़ा सन्तोष होता है। अहो! हम पापी जीवोंपर भी आपकी कितनी दया है।

यमराजने कहा—धर्मके ज्ञाता पुष्कर! तुमने नरक देख लिये। अब जाओ। तुम्हारी पत्नी दु:ख और शोकमें डूबकर रो रही है।

पुष्कर बोले—भगवन्! जबतक इन दु:खी जीवोंकी आवाज कानोंमें पड़ती है तबतक कैसे जाऊँ। जानेपर भी वहाँ मुझे क्या सुख मिलेगा? आपके किंकरोंकी मार खाकर जो आगके ढेरमें गिर रहे हैं, उन नारकीय जीवोंकी यह दिन-रातकी पुकार सुनिये। कितने ही जीवोंके मुखसे निकली हुई यह ध्वनि सुनायी देती है—'हाय! मुझे बचाओ, मेरी रक्षा करो, रक्षा करो।' समस्त भूतोंके आत्मा और सबके ईश्वर सर्वव्यापी श्रीहरिकी मैं नित्य आराधना करता हूँ। इस सत्यके प्रभावसे नारकीय जीव तत्काल मुक्त हो जायँ। भगवान् विष्णु सबमें स्थित हैं और सब कुछ भगवान् विष्णुमें स्थित है। इस सत्यसे नारकीय जीवोंका तुरंत क्लेशसे छुटकारा हो जाय। हे कृष्ण! हे अच्युत! हे जगन्नाथ! हे हरे! हे विष्णो! हे जनार्दन! यहाँ नरकके भीतर यातनामें पड़े हुए इन सब जीवोंकी रक्षा कीजिये।

पुष्करके द्वारा उच्चारित भगवान्‌के नाम सुनकर वहाँ नरकमें पड़े हुए सभी पापी तत्काल उससे छुटकारा पा गये। वे सब बड़ी प्रसन्नताके साथ पुष्करसे बोले—'ब्रह्मन्! हम नरकसे मुक्त हो गये। इससे संसारमें आपकी अनुपम कीर्तिका विस्तार हो।' यमराजको भी इस घटनासे बड़ा विस्मय हुआ। वे पुष्करके पास जा प्रसन्नचित्त होकर वरदानके द्वारा उन्हें

सन्तुष्ट करने लगे। वे बोले—'धर्मात्मन्! तुम पृथ्वीपर जाकर सदा वहीं रहो। तुम्हें और तुम्हारे सुहृदोंको भी मुझसे कोई भय नहीं है। जो मनुष्य तुम्हारे माहात्म्यका प्रतिदिन स्मरण करेगा, उसे मेरी कृपासे अपमृत्युका भय नहीं होगा।'

वसिष्ठजी कहते हैं—यमराजके यों कहनेपर पुष्कर पृथ्वीपर लौट आये और यहाँ पूर्ववत् स्वस्थ हो भगवान् मधुसूदनकी पूजा करते हुए रहने लगे। राजन्! मेरे द्वारा कहे हुए महात्मा पुष्करके इस माहात्म्यको जो सुनता है उसके सारे पापोंका नाश हो जाता है। भगवान् विष्णुका नाम-कीर्तन करनेसे जिस प्रकार नरकसे भी छुटकारा मिल जाता है, वह प्रसङ्ग मैंने तुम्हें सुना दिया। आदिपुरुष परमात्माके नामोंकी थोड़ी-सी भी स्मृति सञ्चित पापोंकी राशिका तत्काल नाश कर देती है, यह बात प्रत्यक्ष देखी गयी है। फिर उन जनार्दनके नामोंका भलीभाँति कीर्तन करनेपर उत्तम फलकी प्राप्ति होगी, इसके लिये तो कहना ही क्या है।*

---
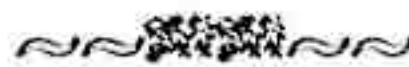
* स्वल्पापि नामस्मृतिरादिपुंसः क्षयं करोत्याहितपापराशेः।
प्रत्यक्षतः किं पुनरत्र दृष्टं संकीर्तिते नाम्नि जनार्दनस्य॥ (२२९। ८३)

माघस्नानके लिये मुख्य-मुख्य तीर्थ और नियम

राजा दिलीपने पूछा—मुने! आप इक्ष्वाकुवंशके गुरु और महात्मा हैं। आपको नमस्कार है। माघस्नानमें संलग्न रहनेवाले पुरुषोंके लिये कौन-कौन-से मुख्य तीर्थ हैं? उनका विस्तारके साथ वर्णन कीजिये। मैं सुनना चाहता हूँ।

वसिष्ठजीने कहा—राजन्! माघमास आनेपर बस्तीसे बाहर जहाँ कहीं भी जल हो, उसे सब ऋषियोंने गङ्गाजलके समान बतलाया है; तथापि मैं तुमसे विशेषत: माघस्नानके लिये मुख्य-मुख्य तीर्थोंका वर्णन करता हूँ। पहला है—तीर्थराज प्रयाग। वह बहुत विख्यात तीर्थ है। प्रयाग सब तीर्थोंमें कामनाकी पूर्ति करनेवाला तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंको देनेवाला है। उसके सिवा नैमिषारण्य, कुरुक्षेत्र, हरिद्वार, उज्जैन, सरयू, यमुना, द्वारका, अमरावती, सरस्वती और समुद्रका सङ्गम, गङ्गा-सागर-संगम, काञ्ची, त्र्यम्बकतीर्थ, सप्तगोदावरीका तट, कालञ्जर, प्रभास, बदरिकाश्रम, महालय, ओंकारक्षेत्र, पुरुषोत्तमक्षेत्र—जगन्नाथपुरी, गोकर्ण, भृगुकर्ण, भृगुतुङ्ग, पुष्कर, तुङ्गभद्रा, कावेरी, कृष्णावेणी, नर्मदा, सुवर्णमुखरी तथा वेगवती नदी—ये सभी माघमासमें स्नान करनेवालोंके लिये मुख्य तीर्थ हैं। गया नामक जो तीर्थ है, वह पितरोंके लिये तृप्तिदायक और हितकर है। ये भूमिपर विराजमान तीर्थ हैं, जिनका मैंने तुमसे वर्णन किया है। राजन्! अब मानसतीर्थ बतलाता हूँ, सुनो। उनमें भलीभाँति स्नान करनेसे मनुष्य परम गतिको प्राप्त होता है। सत्यतीर्थ, क्षमातीर्थ, इन्द्रिय-निग्रहतीर्थ,

सर्वभूतदयातीर्थ, आर्जव (सरलता)-तीर्थ, दानतीर्थ, दम (मनोनिग्रह)-तीर्थ, सन्तोषतीर्थ, ब्रह्मचर्यतीर्थ, नियमतीर्थ, मन्त्र-जपतीर्थ, प्रियभाषणतीर्थ, ज्ञानतीर्थ, धैर्यतीर्थ, अहिंसातीर्थ, आत्मतीर्थ, ध्यानतीर्थ और शिवस्मरणतीर्थ—ये सभी मानस-तीर्थ हैं। मनकी शुद्धि सब तीर्थोंसे उत्तम तीर्थ है। शरीरसे जलमें डुबकी लगा लेना ही स्नान नहीं कहलाता। जिसने मन और इन्द्रियोंके संयममें स्नान किया है, वास्तवमें उसीका स्नान सफल है; क्योंकि वह पवित्र एवं स्नेहयुक्त चित्तवाला माना गया है।*

जो लोभी, चुगलखोर, क्रूर, दम्भी और विषय-लोलुप है, वह सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान करके भी पापी और मलिन ही बना रहता है; केवल शरीरकी मैल छुड़ानेसे मनुष्य निर्मल नहीं होता, मनकी मैल धुलनेपर ही वह अत्यन्त निर्मल होता है। जलचर जीव जलमें ही जन्म लेते और उसीमें मर जाते हैं; किन्तु इससे वे स्वर्गमें नहीं जाते, क्योंकि उनके मनकी मैल नहीं धुली रहती। विषयोंमें जो अत्यन्त आसक्ति होती है, उसीको मानसिक मल कहते हैं। विषयोंकी ओरसे वैराग्य हो जाना ही मनकी निर्मलता है। दान, यज्ञ, तपस्या, बाहर-भीतरकी शुद्धि और शास्त्र-ज्ञान भी तीर्थ ही हैं। यदि अन्त:करणका भाव निर्मल हो तो ये सब-के-सब तीर्थ ही हैं। जिसने

---

* सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रह:॥
सर्वभूतदया तीर्थं तीर्थमार्जवमेव च। दानं तीर्थं दमस्तीर्थं संतोषस्तीर्थमेव च॥
ब्रह्मचर्यं परं तीर्थं नियमस्तीर्थमुच्यते। मन्त्राणां तु जपस्तीर्थं तीर्थं तु प्रियवादिता॥
ज्ञानं तीर्थं धृतिस्तीर्थमहिंसा तीर्थमेव च। आत्मतीर्थं ध्यानतीर्थं पुनस्तीर्थं शिवस्मृति:॥
तीर्थानामुत्तमं तीर्थं विशुद्धिर्मनस: पुन:। न जलाप्लुतदेहस्य स्नानमित्यभिधीयते॥
स स्नातो यो दमस्नात: शुचिस्निग्धमना मत:। (२३७। १२—१७)

इन्द्रिय-समुदायको काबूमें कर लिया है वह मनुष्य जहाँ-जहाँ निवास करता है, वहीं-वहीं उसके लिये कुरुक्षेत्र, नैमिषारण्य और पुष्कर आदि तीर्थ प्रस्तुत हैं। जो ज्ञानसे पवित्र, ध्यानरूपी जलसे परिपूर्ण और राग-द्वेषरूपी मलको धो देनेवाला है, ऐसे मानसतीर्थमें जो स्नान करता है, वह परम गतिको प्राप्त होता है। राजन्! यह मैंने तुम्हें मानसतीर्थका लक्षण बतलाया है।

अब भूतलके तीर्थोंकी पवित्रताका कारण सुनो। जैसे शरीरके कुछ भाग परम पवित्र माने गये हैं, उसी प्रकार पृथ्वीके भी कुछ स्थान अत्यन्त पुण्यमय माने जाते हैं। भूमिके अद्भुत प्रभाव, जलकी शक्ति और मुनियोंके अनुग्रहपूर्वक निवाससे तीर्थोंको पवित्र बताया गया है; इसलिये भौम और मानस सभी तीर्थोंमें जो नित्य स्नान करता है, वह परम गतिको प्राप्त होता है। प्रचुर दक्षिणावाले अग्निष्टोम आदि यज्ञोंसे यजन करके भी मनुष्य उस फलको नहीं पाता जो उसे तीर्थोंमें जानेसे प्राप्त होता है। जिसके दोनों हाथ, दोनों पैर और मन भलीभाँति काबूमें हों तथा जो विद्या, तप और कीर्तिसे सम्पन्न हो, वह तीर्थके फलका भागी होता है। जो प्रतिग्रहसे निवृत्त, जिस किसी वस्तुसे भी सन्तुष्ट रहनेवाला और अहङ्कारसे मुक्त है, वह तीर्थके फलका भागी होता है। श्रद्धापूर्वक एकाग्रचित्त हो तीर्थोंकी यात्रा करनेवाला धीर पुरुष कृतघ्न हो तो भी शुद्ध हो जाता है; फिर जो शुद्ध कर्म करता है, उसकी तो बात ही क्या है? वह मनुष्य पशु-पक्षियोंकी योनिमें नहीं पड़ता, बुरे देशमें जन्म नहीं लेता, दुःखका भागी नहीं होता, स्वर्गलोकमें जाता और मोक्षका उपाय भी प्राप्त कर लेता है।

अश्रद्धालु, पापात्मा, नास्तिक, संशयात्मा और केवल युक्तिवादका सहारा लेनेवाला—ये पाँच प्रकारके मनुष्य तीर्थफलके भागी नहीं होते। जो शास्त्रोक्त तीर्थोंमें विधिपूर्वक विचरते और सब प्रकारके द्वन्द्वोंको सहन करते हैं वे धीर मनुष्य स्वर्गलोकमें जाते हैं। तीर्थमें अर्घ्य और आवाहनके बिना ही श्राद्ध करना चाहिये। वह श्राद्धके योग्य काल हो या न हो, तीर्थमें बिना विलम्ब किये श्राद्ध और तर्पण करना उचित है; उसमें विघ्न नहीं डालना चाहिये। अन्य कार्यके प्रसङ्गसे भी तीर्थमें पहुँच जानेपर स्नान करना चाहिये। ऐसा करनेसे तीर्थयात्राका नहीं, परन्तु तीर्थस्नानका फल अवश्य प्राप्त होता है। तीर्थमें नहानेसे पापी मनुष्योंके पापकी शान्ति होती है। जिनका हृदय शुद्ध है, उन मनुष्योंको तीर्थ शास्त्रोक्त फल प्रदान करनेवाला होता है। जो दूसरेके लिये तीर्थयात्रा करता है, वह भी उसके पुण्यका सोलहवाँ अंश प्राप्त कर लेता है। कुशकी प्रतिमा बनाकर तीर्थके जलमें उसे स्नान करावे। जिसके उद्देश्यसे उस प्रतिमाको स्नान कराया जाता है, वह पुरुष तीर्थस्नानके पुण्यका आठवाँ भाग प्राप्त करता है। तीर्थमें जाकर उपवास करना और सिरके बालोंका मुण्डन कराना चाहिये। मुण्डनसे मस्तकके पाप नष्ट हो जाते हैं। जिस दिन तीर्थमें पहुँचे, उसके पहले दिन उपवास करे और दूसरे दिन श्राद्ध एवं दान करे। तीर्थके प्रसङ्गमें मैंने श्राद्धको भी तीर्थ बतलाया है। यह स्वर्गका साधन तो है ही, मोक्षप्राप्तिका भी उपाय है।

इस प्रकार नियमका आश्रय ले माघमासमें व्रत ग्रहण करना चाहिये और उस समय ऐसी ही तीर्थयात्रा करनी चाहिये। माघमासमें स्नान करनेवाला पुरुष सब जगह कुछ-

न-कुछ दान अवश्य करे। बेर, केला और आँवलेका फल, सेरभर घी, सेरभर तिल, पान, एक आढक (सोलह सेर) चावल, कुम्हड़ा और खिचड़ी—ये नौ वस्तुएँ प्रतिदिन ब्राह्मणोंको दान करनी चाहिये। जिस किसी प्रकार हो सके, माघमासको व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिये। किञ्चित् सूर्योदय होते-होते माघस्नान करना चाहिये। तथा माघस्नान करनेवाले पुरुषको यथाशक्ति शौच-सन्तोष आदि नियमोंका पालन करना चाहिये। विशेषतः ब्राह्मणों और साधु-संन्यासियोंको पकवान भोजन कराना चाहिये। जाड़ेका कष्ट दूर करनेके लिये बोझ-के-बोझ सूखे काठ दान करे। रूईभरा अंगा, शय्या, गद्दा, यज्ञोपवीत, लाल वस्त्र, रूईदार रजाई, जायफल, लरौंग, बहुत-से पान, विचित्र-विचित्र कम्बल, हवासे बचानेवाले गृह, मुलायम जूते और सुगन्धित उबटन दान करे। माघस्नानपूर्वक घी, कम्बल, पूजनसामग्री, काला अगर, धूप, मोटी बत्तीवाले दीप और भाँति-भाँतिके नैवेद्यसे माघस्नानजनित फलकी प्राप्तिके लिये भगवान् माधवकी पूजा करे। माघमासमें डुबकी लगानेसे सारे दोष नष्ट हो जाते हैं और अनेकों जन्मोंके उपार्जित सम्पूर्ण महापाप तत्काल विलीन हो जाते हैं। यह माघस्नान ही मङ्गलका साधन है, यही वास्तवमें धनका उपार्जन है तथा यही इस जीवनका फल है। भला माघस्नान, मनुष्योंका कौन-कौन-सा कार्य नहीं सिद्ध करता? वह पुत्र, मित्र, कलत्र, राज्य, स्वर्ग तथा मोक्षका भी देनेवाला है।

माघमासके स्नानसे सुव्रतको दिव्य लोककी प्राप्ति

वसिष्ठजी कहते हैं—राजन्! सुनो, मैं तुमसे सुव्रतके चरित्रका वर्णन करता हूँ। यह शुभ प्रसङ्ग श्रोताओंके समस्त पापोंको तत्काल हर लेनेवाला है। नर्मदाके रमणीय तटपर एक बहुत बड़ा अग्रहार—ब्राह्मणोंको दानमें मिला हुआ गाँव था। वह लोगोंमें अकलङ्क नामसे विख्यात था, उसमें वेदोंके ज्ञाता और धर्मात्मा ब्राह्मण निवास करते थे। वह धन-धान्यसे भरा था और वेदोंके गम्भीर घोषसे सम्पूर्ण दिशाओंको मुखरित किये रहता था। उस गाँवमें एक श्रेष्ठ ब्राह्मण थे जो सुव्रतके नामसे विख्यात थे। उन्होंने सम्पूर्ण वेदोंका अध्ययन किया था। वेदार्थके वे अच्छे ज्ञाता थे, धर्मशास्त्रोंके अर्थका भी पूर्ण ज्ञान रखते थे, पुराणोंकी व्याख्या करनेमें वे बड़े कुशल थे। वेदाङ्गोंका अभ्यास करके उन्होंने तर्कशास्त्र, ज्यौतिषशास्त्र, गजविद्या, अश्वविद्या, चौंसठ कलाएँ, मन्त्रशास्त्र, सांख्यशास्त्र तथा योगशास्त्रका भी अध्ययन किया था। वे अनेक देशोंकी लिपियाँ और नाना प्रकारकी भाषाएँ जानते थे। यह सब कुछ उन्होंने धन कमानेके लिये ही सीखा था तथा लोभसे मोहित होनेके कारण अपने भिन्न-भिन्न गुरुओंको गुरुदक्षिणा भी नहीं दी थी। उपायोंके जानकार तो थे ही, उन्होंने उक्त उपायोंसे बहुत कुछ धनका उपार्जन किया। उनके मनमें बड़ा लोभ था; इसलिये वे अन्यायसे भी धन

कमाया करते थे। जो वस्तु बेचनेके योग्य नहीं है, उसको भी बेचते और जंगलकी वस्तुओंका भी विक्रय किया करते थे; उन्होंने चाण्डाल आदिसे भी दान लिया, कन्या बेची तथा गौ, तिल, चावल, रस और तेलका भी विक्रय किया। वे दूसरोंके लिये तीर्थमें जाते, दक्षिणा लेकर देवताकी पूजा करते, वेतन लेकर पढ़ाते और दूसरोंके घर खाते थे; इतना ही नहीं, वे नमक, पानी, दूध, दही और पक्वान्न भी बेचा करते थे। इस तरह अनेक उपायोंसे उन्होंने यत्नपूर्वक धन कमाया। धनके पीछे उन्होंने नित्य-नैमित्तिक कर्मतक छोड़ दिया था। न खाते थे, न दान करते थे। हमेशा अपना धन गिनते रहते थे कि कब कितना जमा हुआ। इस प्रकार उन्होंने एक लाख स्वर्णमुद्राएँ उपार्जित कर लीं। धनोपार्जनमें लगे-लगे ही वृद्धावस्था आ गयी और सारा शरीर जर्जर हो गया। कालके प्रभावसे समस्त इन्द्रियाँ शिथिल हो गयीं। अब वे उठने और कहीं आने-जानेमें असमर्थ हो गये। धनोपार्जनका काम बन्द हो जानेसे स्त्रीसहित ब्राह्मण देवता बहुत दु:खी हुए। इस प्रकार चिन्ता करते-करते जब उनका चित्त बहुत व्याकुल हो गया, तब उनके मनमें सहसा विवेकका प्रादुर्भाव हुआ।

सुव्रत अपने-आप कहने लगे—मैंने नीच प्रतिग्रहसे, नहीं बेचने योग्य वस्तुओंके बेचनेसे तथा तपस्या आदिका भी विक्रय करनेसे यह धन जमा किया है; फिर भी मुझे शान्ति नहीं मिली। मेरी तृष्णा अत्यन्त दुस्सह है। यह मेरु पर्वतके समान असंख्य सुवर्ण पानेकी अभिलाषा रखती है।

अहो! मेरा मन महान् कष्टदायक और सम्पूर्ण क्लेशोंका कारण है। सब कामनाओंको पाकर भी यह फिर दूसरी-दूसरी नवीन कामनाओंको प्राप्त करना चाहता है। बूढ़े होनेपर सिरके बाल पक जाते हैं, दाँत टूट जाते हैं, आँख और कानोंकी शक्ति भी क्षीण हो जाती है; किन्तु एक तृष्णा ही ऐसी है, जो उस समय भी नित्य तरुण होती जाती है। जिसके मनमें कष्टदायिनी आशा मौजूद है, वह विद्वान् होकर भी अज्ञानी है, अशान्त है, क्रोधी है और बुद्धिमान् होकर भी अत्यन्त मूर्ख है। आशा मनुष्योंको नष्ट करनेवाली है, उसे अग्निके समान जानना चाहिये; अतः जो विद्वान् सनातन पदको प्राप्त करना चाहता हो, वह आशाका परित्याग कर दे। बल, तेज, यश, विद्या, सम्मान, शास्त्रज्ञान तथा उत्तम कुलमें जन्म—इन सबको आशा शीघ्र ही नष्ट कर देती है। मैंने भी इसी प्रकार बहुत क्लेश उठाकर यह धन कमाया है। वृद्धावस्थाने मेरे शरीरको भी गला दिया और सारा बल भी हर लिया। अबसे मैं श्रद्धापूर्वक परलोक सुधारनेके लिये प्रयत्न करूँगा।

ऐसा निश्चय करके ब्राह्मण देवता जब धर्मके मार्गपर चलनेके लिये उत्सुक हुए, उसी दिन रातमें कुछ चोर उनके घरमें घुस आये। आधी रातका समय था; आततायी चोरोंने ब्राह्मणको खूब कसकर बाँध दिया और सारा धन लेकर चंपत हुए। चोरोंके द्वारा धन छिन जानेपर ब्राह्मण अत्यन्त दारुण विलाप करने लगा—'हाय! मेरा धन कमाना धर्म, भोग अथवा मोक्ष—किसी भी काममें नहीं आया। न तो मैंने

उसे भोगा और न दान ही किया। फिर किसलिये धनका उपार्जन किया? हाय! हाय! मैंने अपने आत्माको धोखेमें डालकर यह क्या किया? सब जगहसे दान लिया और मदिरातकका विक्रय किया। पहले तो एक ही गौका प्रतिग्रह नहीं लेना चाहिये। यदि एकको ले लिया तो दूसरीका प्रतिग्रह लेना कदापि उचित नहीं है। उस गौको भी यदि बेच दिया जाय तो वह सात पीढ़ियोंको दग्ध कर देती है। इस बातको जानते हुए भी मैंने लोभवश ऐसे-ऐसे पाप किये हैं। धन कमानेके जोशमें मैंने एक दिन भी एकाग्रचित्त होकर अच्छी तरह सन्ध्योपासना नहीं की। अगर्भ (ध्यानरहित) या सगर्भ (ध्यानसहित) प्राणायाम भी नहीं किया। तीन बार जल पीकर और दो बार ओठ पोंछकर भलीभाँति आचमन नहीं किया। उतावली छोड़कर और हाथमें कुशकी पवित्री लेकर मैंने कभी गायत्रीमन्त्रका वाचिक, उपांशु अथवा मानस जप भी नहीं किया। जीवोंका बन्धन छुड़ानेवाले महादेवजीकी आराधना नहीं की। जो मन्त्र पढ़कर अथवा बिना मन्त्रके ही शिवलिङ्गके ऊपर एक पत्ता या फूल डाल देता है, उसकी करोड़ों पीढ़ियोंका उद्धार हो जाता है; किन्तु मैंने कभी ऐसा नहीं किया। सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाले भगवान् विष्णुको कभी सन्तुष्ट नहीं किया। पाँच प्रकारकी हत्याओंके पाप शान्त करनेवाले पञ्चयज्ञोंका अनुष्ठान नहीं किया। स्वर्गलोककी प्राप्ति करानेवाले अतिथिके सत्कारसे भी वञ्चित रहा। संन्यासीका सत्कार करके उसे अन्नकी भिक्षा नहीं दी। ब्रह्मचारीको विधिपूर्वक अतिथिके योग्य भोजन नहीं दिया।

'मैंने ब्राह्मणोंको भाँति-भाँतिके सुन्दर एवं महीन वस्त्र नहीं अर्पण किये। सब पापोंका नाश करनेके लिये प्रज्वलित अग्निमें घीसे भीगे हुए मन्त्रपूत तिलोंका हवन नहीं किया। श्रीसूक्त, पावमानी ऋचा, मण्डल ब्राह्मण, पुरुषसूक्त और परमपवित्र शतरुद्रिय मन्त्रका जप नहीं किया। पीपलके वृक्षका सेवन नहीं किया। अर्कत्रयोदशीका व्रत त्याग दिया। वह भी यदि रातको अथवा शुक्रवारके दिन पड़े तो तत्काल सब पापोंको हरनेवाली है; किन्तु मैंने उसकी भी उपेक्षा कर दी। ठंढी छायावाले सघन वृक्षका पौधा नहीं लगाया। सुन्दर शय्या और मुलायम गद्देका दान नहीं किया। पंखा, छतरी, पान तथा मुखको सुगन्धित करनेवाली और कोई वस्तु भी ब्राह्मणको दान नहीं दी। नित्य श्राद्ध, भूतबलि तथा अतिथि-पूजा भी नहीं की। उपर्युक्त उत्तम वस्तुओंका जो लोग दान करते हैं, वे पुण्यके भागी मनुष्य यमलोकमें यमराजको, यमदूतोंको और यमलोककी यातनाओंको नहीं देखते; किन्तु मैंने यह भी नहीं किया। गौओंको ग्रास नहीं दिया। उनके शरीरको कभी नहीं खुजलाया, कीचड़में फँसी हुई गौको जो गोलोकमें सुख देनेवाली होती है, मैंने कभी नहीं निकाला। याचकोंको उनकी मुँहमाँगी वस्तुएँ देकर कभी सन्तुष्ट नहीं किया। भगवान् विष्णुकी पूजाके लिये कभी तुलसीका वृक्ष नहीं लगाया। शालग्रामशिलाके तीर्थभूत चरणामृतको न तो कभी पीया और न मस्तकपर ही चढ़ाया। एक भी पुण्यमयी एकादशी तिथिको उपवास नहीं किया। शिवलोक प्रदान करनेवाली शिवरात्रिका भी व्रत

नहीं किया। वेद, शास्त्र, धन, स्त्री, पुत्र, खेत और अटारी आदि वस्तुएँ इस लोकसे जाते समय मेरे साथ नहीं जायँगी। अब तो मैं बिलकुल असमर्थ हो गया; अत: कोई उद्योग भी नहीं कर सकूँगा। क्या करूँ, कहाँ जाऊँ। हाय! मुझपर बड़ा भारी कष्ट आ पड़ा। मेरे पास परलोकका राहखर्च भी नहीं है।'

इस प्रकार व्याकुलचित्त होकर सुव्रतने मन-ही-मन विचार किया—'अहो! मेरी समझमें आ गया, आ गया, आ गया। मैं धन कमानेके लिये उत्तम देश काश्मीरको जा रहा था। मार्गमें भागीरथी गङ्गाके तटपर मुझे कुछ ब्राह्मण दिखायी दिये जो वेदोंके पारगामी विद्वान् थे। वे प्रात:काल माघस्नान करके बैठे थे; वहाँ किसी पौराणिक विद्वान्‌ने उस समय यह आधा श्लोक कहा था—

माघे निमग्नाः सलिले सुशीते
विमुक्तपापास्त्रिदिवं प्रयान्ति॥

(२३८। ७८)

'माघमासमें शीतल जलके भीतर डुबकी लगानेवाले मनुष्य पापमुक्त हो स्वर्गलोकमें जाते हैं।'

पुराणमेंसे मैंने इस श्लोकको सुना है। यह बहुत ही प्रामाणिक है; अत: इसके अनुसार मुझे माघका स्नान करना ही चाहिये।

मन-ही-मन ऐसा निश्चय करके सुव्रतने अपने मनको सुस्थिर किया और नौ दिनोंतक नर्मदाके जलमें माघमासका स्नान किया। उसके बाद स्नान करनेकी भी शक्ति नहीं रह

गयी। वे दसवें दिन किसी तरह नर्मदाजीमें गये और विधिपूर्वक स्नान करके तटपर आये। उस समय शीतसे पीड़ित होकर उन्होंने प्राण त्याग दिया। उसी समय मेरुगिरिके समान तेजस्वी विमान आया और माघस्नानके प्रभावसे सुव्रत उसपर आरूढ़ हो स्वर्गलोकको चले गये। वहाँ एक मन्वन्तरतक निवास करके वे पुनः इस पृथ्वीपर ब्राह्मण हुए। फिर प्रयागमें माघस्नान करके उन्होंने ब्रह्मलोक प्राप्त किया।

पद्मपुराणान्तर्गत माघमास-माहात्म्य सम्पूर्ण